कार्यशाला

डिजिटल युग में लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व

अभिशासन की चुनौतियों से अभिशासन में सुगमता की ओर

14–15 नवंबर 2016, नई दिल्ली

कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न

विषय सूची

1. अभिशासन का डिजिटलीकरण क्या होता है?
2. बिग डेटा क्या होता है?
3. सरकार अपनी निर्णय प्रक्रिया में बिग डेटा के विश्लेषण का किस तरह इस्तेमाल करती है?
4. निर्णय प्रक्रिया में बिग डेटा का इस्तेमाल करते समय नीति-निर्माताओं को किन मुख्य मुद्दों/चिंताओं का ध्यान रखना चाहिए?
5. हमारे देश में अभिशासन के डिजिटलीकरण की कार्यदिशा क्या रही है? क्या इससे लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व में सुधार आया है?

   5.1 शुरुआती दौर

   5.2 डिजिटल भारत

   5.3 डिजिटलीकरण तथा लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व
6. आधार क्या है? सेवा डिलीवरी में इसके प्रयोग के क्या निहितार्थ रहे हैं?
7. कुछ लोग ऐसा क्यों कहते हैं कि आधार परियोजना लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व का हनन करती है?
8. मैंने सुना है कि आधार परियोजना एक क्रांतिकारी आर्थिक व्यवस्था विकसित कर रही है जिसमें गरीबों और बिना बैंक खाते वाले लोगों का समावेशन किया जा सकता है और प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण की एक मुक्कमल व्यवस्था लागू की जा सकती है। क्या यह सच है?
9. साझा सेवा केंद्र क्या होते हैं?
10. स्मार्ट सिटी क्या है? कुछ लोग ऐसा क्यों मानते हैं कि इससे सामाजिक बेदखली बढ़ेगी?
11. अभिशासन के बिग डेटा के इस्तेमाल के प्रति भारत सरकार का रवैया क्या रहा है?
12. डिजिटल अधिकारों का क्या मतलब होता है? ये क्यों महत्वपूर्ण होते हैं?
13. भारत में डिजिटल अधिकारों के एजेंडा को आगे बढ़ाने के लिहाज से कुछ महत्वपूर्ण नीतिगत बदलाव क्या रहे हैं?
14. इंटरनेट तक पहुंच के मामले में भारत आज कहां पहुंचा है?

1. अभिशासन का डिजिटलीकरण क्या होता है?

जब शासन की कुशलता और प्रभाव को बढ़ाने तथा नागरिकों के साथ शासन के आदान-प्रदान व संबंधों को सुधारने के लिए सेवा डिलीवरी के पुनर्निधारण और नागरिक संलग्नता को बढ़ाने हेतु डिजिटल तकनीकों (कंप्यूटर, इंटरनेट और मोबाइल फोन) का सुनियोजित ढंग से इस्तेमाल किया जाता है तो इसे अभिशासन का डिजिटलीकरण या डिजिटलाइजेशन (digitalisation) कहा जाता है।

नीति निर्माता अकसर यह दावा करते दिखायी देते हैं कि डिजिटलीकरण से कई महत्वपूर्ण लाभ हासिल किए जा सकते हैं।

सरकारी दफ्तरों में भ्रष्टाचार में कमी : परंपरागत रूप से हमारे देश के नागरिक अपने आवेदन जिन विभागों/एजेंसियों में जमा कराते रहे हैं वहां प्रायः उनकी आवेदनों पर तेजी से सुनवाई नहीं होती। ऐतिहासिक रूप से हमारे देश में एक भाई-भतीजावाद की संस्कृति रही है। फ्रंट ऑफिस स्टाफ, स्थानीय नौकरशाह और हमारे राजनेता अकसर इन आवेदनों को तेजी से आगे बढ़ाने के लिए दलाल की भूमिका निभाते हैं। कल्याण संबंधी प्रक्रियाओं के डिजिटलीकरण से इन बिचौलियों को काबू किया जा सकता है और नागरिकों के लिए एक सीधा, बिचौलियों से मुक्त रास्ता खोला जा सकता है। इससे भ्रष्टाचार के जाल को भी तहस-नहस किया जा सकता है।

कल्याण सेवाओं का लाभ लेने की प्रक्रिया में समय की बचत : सरकारी विभागों के वेब पोर्टल्स (वेबसाइट्स के समूह) का इस्तेमाल करके नागरिक एक माउस का बटन दबाकर अपने लिए उपलब्ध सुविधाओं के लिए आवेदन भेज सकते हैं। स्थानीय डिजिटल केंद्रों में उपलब्ध डिजिटल माध्यमों से नागरिकों को सार्वजनिक सूचनाओं तक पहुंच भी आसानी से मिल जाती है और उनके आवेदनों पर कार्रवाई भी ज्यादा तेजी से हो पाती है। मोबाइल आधारित एलर्ट्स से आवेदकों को समय-समय पर यह पता चलता रहता है कि उनके आवेदन की स्थिति क्या है। इसके जरिए नागरिक आवेदन/शिकायत की स्थिति जानने के लिए जगह-जगह धक्के खाने से बच जाते हैं। इस तरह हम 'उत्तम अभिशासन' को नागरिक के द्वार तक ला सकते हैं।

सरकार के साथ नागरिकों का आदान-प्रदान : नागरिक किसी खास नीति पर अपनी राय दे सकते हैं या अपनी शिकायतें व्यक्त कर सकते हैं और स्थानीय समस्याओं के समाधान ढूंढ़ने में हिस्सेदारी भी कर सकते हैं क्योंकि डिजिटल प्लेटफॉर्म दूर-दूर तक संवाद और संचार को संभव बना देते हैं जबकि इसकी कोई अतिरिक्त लागत नहीं आती।

वास्तविक जीवन के हिसाब से लाभों की यह तस्वीर अतिसरलीकृत दिखाई पड़ती है। पहली बात यह है कि वॉयस और डेटा सहित स्तरीय कनेक्टिविटी की सुविधा हमारे यहां अभी भी बहुत भरोसेमंद और पूरे देश में उपलब्ध नहीं है। दूसरी बात, गरीब और हाशियाई तबकों के लोग बहुधा विभिन्न डिजिटल उपकरणों का न तो खर्चा उठा पाते हैं और न ही उन्हें सोच-समझकर इस्तेमाल करना जानते हैं जिससे वे कनेक्टिविटी का पूरा लाभ ले सकें। इसके अलावा, जिन लोगों को इस साधनों के इस्तेमाल का कौशल हासिल करने के अवसर नहीं मिले हैं उनके लिए यह तकनीक एक भयभीत करने वाला साधन भी हो सकती है।

केवल ऑनलाइन सेवाएं उपलब्ध करा देने या डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के जरिए शासन के साथ संवाद की संभावनाएं खोल देने का यह मतलब नहीं निकाला जा सकता कि अब स्थानीय अभिजात्य तबके द्वारा जोड़तोड़ पूरी तरह खत्म हो जाएगी। अब बिचौलियों का एक नया वर्ग सामने आ रहा है। यह वर्ग ऐसे नागरिकों के शोषण पर फल-फूल रहा है जिनके पास अभी भी बहुत मामूली या न के बराबर डिजिटल कौशल हैं। प्रौद्योगिकी के माध्यम से नागरिकों के बीच होने वाले आदान-प्रदान से उनके परस्पर संगठित होने की संभावनाएं भी सीमित हो जाती हैं जोकि लोकतंत्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

2. बिग डेटा क्या होता है?

जैसे-जैसे इंटरनेट और मोबाइल फोन फैलते जाते हैं, वैसे-वैसे हमारे डिजिटल अंश या फुटप्रिंट - यानी इंटरनेट और मोबाइल फोन इस्तेमाल करने वालों से संबंधित निजी जानकारियों के छोटे-छोटे अंश - भी पीछे छूटते जाते हैं। इस बारे में अकसर हमें मालूम भी नहीं होता है कि हमारे से जुड़ी कोई जानकारी कहीं छूट गई है। हमारी ऑनलाइन बैंकिंग का रिकॉर्ड, हमारे मोबाइल कॉल के रिकॉर्ड, फेसबुक पर हमारे 'लाइक्स' और 'डिसलाइक्स' की हिस्ट्री, गूगल पर हमारे द्वारा की गई चीजों की खोज, ओला/ऊबर वगैरह टैक्सियों में सवारी का ब्यौरा, सार्वजनिक स्थानों में लगे सीसीटीवी कैमरों में कैद हमारी तस्वीरें, स्थानीय

सुपर मार्केट में हमारे बिलिंग का ब्यौरा - ये सारी छोटी छोटी जानकारियां साइबर स्पेस में यहां-वहां छितरा जाती हैं। ये जानकारियां हमारे व्यक्तिगत अतीत और हमारी 'शख्सियतों' के बारे में बहुत कुछ बता सकती हैं।

जब अलग-अलग जगहों पर बिखरा यह तरह-तरह का और सतही तौर पर एक-दूसरे से अलग-थलग दिखाई देने वाला डेटा इकट्ठा किया जाता है और 'एलगोरिदम'[1] नामक एक खास तरह के गणितीय कंप्यूटर प्रोग्राम के जरिए इसका विश्लेषण किया जाता है तो प्रयोक्ताओं के व्यक्तिगत और सामुदायिक व्यवहार में एक तरह का पैटर्न दिखाई पड़ने लगता है। विश्लेषण की इसी प्रक्रिया को बिग डेटा विश्लेषण कहा जाता है।

बिग डेटा के दो महत्वपूर्ण आयाम होते हैं :

क. बिग डेटा का रियल टाइम में यानी तत्काल भी विश्लेषण किया जाता है क्योंकि यह डेटा लगातार पैदा होता रहता है और दुनिया भर में होने वाले डिजिटल लेनदेन की प्रक्रियाओं में बड़ी तादाद में जमा होता जाता है।

ख. जब लोग डिजिटल उपकरणों का इस्तेमाल करते हैं तो निष्क्रिय रूप से बिग डेटा पैदा होता रहता है। खास सैद्धांतिक सवालों की पड़ताल के लिए वैज्ञानिक ढंग से इकट्ठा किए गए नमूनों के डेटा सेट पर आधारित परंपरागत विश्लेषण में हमारा जोर किसी परिघटना के कारणों को पहचानने पर ज्यादा रहता है (जैसे, जब हम परिवारों के स्वास्थ्य की स्थिति का अध्ययन करते हैं तो खानपान की आदतों में लैंगिक भेदभाव की भूमिका का अध्ययन किया जा सकता है)। बिग डेटा के विश्लेषण में हमारा फोकस कारणों या स्थिति के सैद्धांतिक विश्लेषण पर नहीं होता बल्कि ऐसी सूचनाओं में एक पैटर्न ढूंढ़ने का प्रयास किया जाता है जो आपस में जुड़ी होती हैं। हो सकता है कि इस तरह के पैटर्न या रुझानों से कारण-प्रभावों का सहसंबंध सामने न आ पाए।

बिग डेटा विश्लेषण का इनके लिए इस्तेमाल किया जाता है :

- किसी खास स्थिति का विवरणात्मक विश्लेषण (जैसे किसी शहर के निवासियों के मोबाइल फोनों से पैदा होने वाले जियो-लोकेशन (आप कहां हैं, इससे संबंधित जानकारी) डेटा का इस्तेमाल करके यह पता लगाया जा सकता है कि किन रास्तों पर सबसे ज्यादा आवागमन होता है।)
- संभाव्यतावादी विश्लेषण जो विवरणात्मक विश्लेषण से उभरे रुझानों के आधार पर आने वाले समय के बारे में अनुमानों को जन्म देता है (जैसे, चुनाव नतीजों का अनुमान लगाने के लिए चुनाव के पहले सोशल मीडिया का विश्लेषण करना)।

यहां इस बात को समझना जरूरी है कि बिग डेटा के रुझानों का विश्लेषण हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक व्यवहार पर बहुत गहरा असर डाल सकता है। आइए इस बात को एक उदाहरण की मदद से समझने की कोशिश करें : जब कोई व्यक्ति एमेज़ॉन नाम की वेबसाइट पर किताबों की खरीदारी करता है तो वेबसाइट उसे कुछ दूसरी किताबों का भी सुझाव देती है। एमेज़ॉन के एलगॉरिदम को किताबों या पठन संस्कृति के बारे में शायद कुछ भी पता नहीं होगा। यह गणित तो केवल ग्राहकों के ऑनलाइन व्यवहार के रुझानों को पहचानकर इस बात का अनुमान जताता है कि अगर आपको फलां किताब पसंद आई है तो शायद आपको उसी तरह की यह या वह किताब भी पसंद आ सकती है। एमेज़ॉन के पास जो विशालकाय डेटा है उससे इस तरह की प्राथमिकताओं या पसंद-नापसंद का अंदाजा लगाना मुमकिन हो जाता है। कुछ यही तर्क गूगल के व्यक्तिगत (पर्सनलाइज्ड) सर्च विकल्पों, फेसबुक के व्यक्तिगत न्यूज फीड्स वगैरह के मामले में लागू होता है। जब एलगॉरिदम यह तय कर देता है कि कोई व्यक्ति संभवतः क्या पसंद करता है, वह ऑनलाइन क्या ढूंढ़ता या खरीदता है, तो इन्सानी फैसले और सामाजिक पसंद-नापसंद बहुत गहरे तौर पर प्रभावित होने लगती है। लिहाजा, बिग डेटा के विश्लेषण के आधार पर व्यक्त किए गए अनुमान व्यक्तिगत और सामाजिक, दोनों धरातलों पर हमारे फैसलों को प्रभावित कर सकते हैं। इसमें खतरा यह है कि लंबे दौर में बिग डेटा के प्रोजेक्शन और उसमें छिपे आग्रह सिर्फ हमारे व्यवहार का अनुमान लगाने की बजाय उसको 'निर्धारित' भी करना शुरू कर सकते हैं। इसका मतलब यह है कि बिग डेटा सामाजिक नियंत्रण का एक बेहतरीन औजार भी बन सकता है।

3. सरकार अपनी निर्णय प्रक्रिया में बिग डेटा के विश्लेषण का किस तरह इस्तेमाल करती है?

सार्वजनिक निर्णय प्रक्रिया में बिग डेटा की अभूतपूर्व शक्ति तेजी से स्थापित होती जा रही है। नीति निर्माताओं को अकसर यह लगता है कि आंकड़े जुटाने की परंपरागत पद्धतियां महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय एवं सामाजिक व्यवहार संबंधी रुझानों के बारे में विश्लेषणात्मक अंतर्दृष्टि मुहैया कराने में बहुत धीमी होती है। सरकारों को बिग डेटा के विश्लेषण से तत्काल और समय पर

फैसले लेने का आधार और संभावनाएं मिल जाती हैं। इसी कारण सरकारों के लिए बिग डेटा के विश्लेषण का आकर्षण बढ़ता जा रहा है। सरकारों को लगता है कि इससे वे अपनी जनता की नब्ज को पहचान सकती हैं और सार्वजनिक नीति संबंधी फैसले लेने के समय केवल हालात के अनुसार प्रतिक्रिया देने की बजाय अपनी तरफ से हालात को तय करने के लिए भी कदम उठा सकती हैं।

आजकल सरकारें बहुत सारे उद्देश्यों के लिए बिग डेटा के विश्लेषण का इस्तेमाल कर रही हैं। मिसाल के तौर पर :

- सोशल मीडिया और सरकारी पोर्टल्स (वेबसाइट्स के समूह) की डेटा माइनिंग[2] पर आधारित स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाओं के इस्तेमाल से संबंधित रुझानों का विश्लेषण करना;
- किसी महामारी की आशंका का पता लगाना (जैसे, जब पश्चिमी अफ्रीका में इबोला नामक महामारी फैली थी तो यह जानने के लिए जियो-लोकेशन संबंधी सूचनाओं का सहारा लिया गया था कि किस इलाके के लोग संभवतः कहां जाने वाले हैं);
- नागरिकों के ऋण संबंधी इतिहास, ऑनलाइन खरीद व्यवहार और सोशल मीडिया पर उनकी सक्रियता के आधार पर नागरिकों की 'विश्वसनीयता' तय करने के लिए एक नागरिक रेटिंग व्यवस्था विकसित करना। चीन की सरकार ने भी ई-रीटेल प्लेटफॉर्म अलीबाबा की साझीदारी में इसी तरह का कार्यक्रम शुरू किया है;
- नागरिकों से नीतिगत प्राथमिकताओं के बारे में सुझाव और राय आमंत्रित करना।

4. निर्णय प्रक्रिया में बिग डेटा का इस्तेमाल करते समय नीति-निर्माताओं को किन मुख्य मुद्दों/चिंताओं का ध्यान रखना चाहिए?

1. बिग डेटा अधारित विश्लेषण को निर्णयकारी उपकरण के रूप में अलग-थलग इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। इसकी वजह यह है कि हमारी लोक नीति से संबंधित फैसले लोक हित के बहुत सारे जटिल पहलुओं पर आधारित होने चाहिएं। बिग डेटा सामाजिक व्यवहार के रुझानों के बारे में प्रत्यक्ष समझ तो मुहैया करा सकता है मगर यह नहीं बता सकता कि इसके पीछे संभावित 'कारण-प्रभाव' सहसंबंध क्या हैं। यानी, यह विश्लेषण किसी सामाजिक समस्या के पीछे छिपे 'क्यों' वाले आयाम की सुनियोजित जांच का विकल्प नहीं हो सकता। न ही इससे विभिन्न संभावित 'समाधानों' के लाभों/हानियों के बारे में नैतिक धरातल पर विचार किया जा सकता है। इसके अलावा, बिग डेटा और उसके विश्लेषणात्मक नतीजों में इस आधार पर एक प्रछन्न या सोचा-समझा झुकाव भी छिपा रहता है कि यह विश्लेषण किसके द्वारा और कहां किया जा रहा है। बिग डेटा से यह तो पता चल सकता है कि 'क्या स्थिति है' मगर नीति निर्धारण की प्रक्रियाएं अकसर इस पर भी आधारित होती हैं कि 'क्या होना चाहिए।' अगर नीति निर्धारण की प्रक्रिया केवल बिग डेटा पर ही आश्रित होती जाएगी तो 'तथ्य आधारित' और 'कुशलता केंद्रित' चिंताओं के नाम पर नैतिक सवालों को तिलांजलि दे दी जाएगी।

   आइए जरा एक उदाहरण पर गौर करें। इमरजेंसी पुलिस कंट्रोल रूम में आने वाली फोन कॉल्स के रिकॉर्ड के विश्लेषण के आधार पर ऐसी बस्तियों और मोहल्लों की शिनाख्त की जाती है जहां अपराध की दर ज्यादा दिखाई दे रही है। मगर, यदि आप केवल इसी डेटा के आधार पर ऐसी बस्तियों में गश्त बढ़ा देते हैं तो यह फैसला गलत भी साबित हो सकता है। निम्न मध्यवर्गीय बस्तियों और मोहल्लों के निवासी पुलिस को बुलाने में संपन्न बस्तियों के निवासियों के मुकाबले ज्यादा हिचकिचाते हैं और इसलिए मोबाइल रिकॉर्ड्स से जो डेटा इकट्ठा किया गया है हो सकता है उससे यह स्पष्ट न हो पाए कि वास्तव में गश्त की ज्यादा जरूरत कहां है। बिग डेटा विश्लेषण के नतीजों को उसके संदर्भ से काटकर नहीं देखा जा सकता। यह एक महत्वपूर्ण पहलू है। दूसरी बात, शासन को अपने संसाधन पहले कहां इस्तेमाल करने चाहिए, इससे संबंधित फैसला भी एक अलग मुद्दा है जिसके लिए डेटा आधारित पद्धति की बजाय मानकों से संबंधित सोच-विचार और पद्धति की जरूरत होती है।

2. हो सकता है कि बिग डेटा आधारित विश्लेषण ऐसे समूहों की प्राथमिकताओं को पूरी तरह नजरअंदाज कर दे जिनके डिजिटल फुटप्रिंट बहुत मामूली हैं यानी जो डिजिटल साधनों का बहुत कम इस्तेमाल करते हैं। ऐसे में, जो गरीब और हाशियाई तबके इंटरनेट और मोबाइल का बहुत कम इस्तेमाल करते हैं उनके सामने नजरअंदाज हो जाने की सबसे ज्यादा आशंका रहती है। उदाहरण के लिए, जब नगर प्रशासन लोगों के सुझाव और राय आमंत्रित करता है यानी क्राउड सोर्स[3] करता है तो केवल ऐसे लोग ही इस प्रक्रिया में हिस्सा ले पाते हैं जिनके पास स्मार्ट फोन हैं और जो उस प्रक्रिया में

हिस्सेदारी के तरीके जानते हैं। इस तरह के बिग डेटा के आधार पर लिए गए फैसलों और संसाधनों के आबंटन से ऐसी गरीब आबादियों के नजरअंदाज हो जाने का खतरा पैदा हो जाता है जो डेटा रेडार पर नहीं आ पाते।

3. बिग डेटा सेट पर पूर्वानुमान व्यक्त करने के लिए संभाव्यतावादी विश्लेषण भी पूर्वाग्रहों या झुकावों से मुक्त या तटस्थ नहीं होते। बिग डेटा की माइनिंग एलगॉरिदम नामक बहुत जटिल गणितीय सूत्रों की मदद से की जाती है। यह प्रक्रिया अकसर ऐसे सामाजिक पूर्वाग्रहों और असमानाताओं को और ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर देती है जो अकसर खुद उन लोगों को भी दिखाई नहीं पड़ते जो उनके वाहक हैं। उदाहरण के लिए, अमेरिका जैसे देशों में विधि क्रियान्वयन विभाग द्वारा गश्त से संबंधित फैसले लेने के लिए बिग डेटा का विश्लेषण करके अनुमान लगाए जाते हैं। शिक्षा के स्तर, यार-दोस्तों की आपराधिक पृष्ठभूमि, साइकोमिट्रिक जांचों के नतीजों, परिवार में शराब की लत वगैरह से संबंधित सूचनाओं के आधार पर पुलिस अधिकारी यह आकलन करते हैं कि किन लोगों के फिर से अपराध करने की आशंका ज्यादा है। नागरिक अधिकार संगठनों ने बार-बार इस बात को रेखांकित किया है कि इन उपरकणों और विश्लेषणों में जिन विशेषताओं का इस्तेमाल किया जाता है वे अकसर अश्वेत आबादी के खिलाफ होते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि श्वेत अपराधियों के मुकाबले अश्वेत अपराधियों में फिर से अपराध करने की ज्यादा संभावना दिखाई पड़ने लगती है।

5. हमारे देश में अभिशासन के डिजिटलीकरण की कार्यदिशा क्या रही है? क्या इससे लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व में सुधार आया है?

5.1 शुरुआती दौर

भारत में शासन और नागरिकों के बीच आदान-प्रदान की कुशलता में सुधार के लिए डिजिटल प्रौद्योगिकी (खासतौर से इंटरनेट और मोबाइल फोन) की संभावनाओं को समझने की व्यवस्थित शुरुआत इक्कीसवीं शताब्दी के शुरुआती सालों में हुई थी। तब से, 'ई-गवर्नेंस' शब्द आमतौर पर लोक प्रशासन के डिजिटलीकरण के लिए ही इस्तेमाल किया जाता रहा है।

विभिन्न विभागों में तैनात ई-गवर्नमेंट के हिमायतियों ने सबसे पहले जिला स्तर पर ई-सर्विस डिलीवरी के छोटे-छोटे प्रयोग शुरू किए थे। जल्दी ही उन्हें यह बात समझ में आ गई थी कि न तो इन प्रयोगों को लंबे समय तक कायम रखा जा सकता है और न ही तब तक इनको विस्तार दिया जा सकता है जब तक कि आवेदनों पर कार्रवाई के तरीकों को डिजिटल सांचे में नहीं ढाला जाएगा। उदाहरण के लिए, अगर उस समय सेवा डिलीवरी के लिए कोई ई-रिक्वेस्ट आती थी तो विभाग के अधिकारी उसकी फाइल खोलते थे, ई-रिक्वेस्ट का प्रिंटआउट लेते थे और विभिन्न स्तरों पर मंजूरी के लिए उसे अलग-अलग दफ्तरों में लेकर जाते थे। कुल मिलाकर नई व्यवस्था और पुरानी व्यवस्था में कोई ज्यादा फर्क नहीं था। इसके विपरीत, यदि ई-सर्विस डिलीवरी के आवेदनों पर डिजिटल कार्रवाई के लिए नई प्रक्रियाओं की स्थापना की जाती है जिसमें विभिन्न अधिकारी अपने-अपने दफ्तरों में लॉग-इन करके उन पर टिप्पणी लिखते, अपनी स्वीकृति देते तो अंतर्विभागीय प्रक्रियाओं में भारी सुधार आता। इसके अलावा, सेवा संबंधी आवेदनों पर कार्रवाई के लिए इस तरह के डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के इस्तेमाल से नागरिकों के मोबाइल नम्बर पर ऑटो एलर्ट भी भेजा जा सकता था जिससे फाइल की मौजूदा स्थिति के बारे में पता चले और पुरानी व्यवस्था के मुकाबले नई व्यवस्था ज्यादा पारदर्शी दिखाई दे।

कल्याणकारी सेवाओं की डिलीवरी की मौजूदा मानवीय व्यवस्था में आमूल बदलाव के लिए सरकार ने 2006 में डिजिटलीकरण की एक विस्तृत योजना तैयार की जिसे 'राष्ट्रीय ई-अभिशासन योजना' (नैशनल ई-गवर्नेंस प्लान) के नाम से जाना जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य यह था कि "*सभी सरकारी सेवाओं को साझा सेवा डिलीवरी केंद्रों के माध्यम से आम आदमी के आसपास मुहैया कराया जाए और आम लोगों की मूलभूत जरूरतों को पूरा करने के लिए इन सेवाओं की कुशलता, पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित की जाए।*" इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस योजना में राज्यव्यापी नेटवर्क तैयार करने की भी योजना बनाई गई ताकि नागरिकों और सरकारी विभागों के बीच वर्चुअल आदान-प्रदान संभव हो और राज्य स्तर पर मौजूद डेटा केंद्रों में कल्याण सेवाओं की डिलीवरी से संबंधित डिजिटल डेटा इकट्ठा किया जा सके। यहां इस बात को रेखांकित करना जरूरी है कि इस योजना में भी मौजूदा मानवीय व्यवस्था के डिजिटलीकरण का सिर्फ एक ब्लूप्रिंट मुहैया कराया गया था : *इसमें इस आशय के सामाजिक-राजनीतिक प्रश्नों पर कोई दीर्घकालिक समझ दिखाई नहीं पड़ती थी* कि शासन के स्तर पर आईसीटी के

इस्तेमाल से किस तरह के रूपांतरकारी बदलाव लाए जा सकते हैं। मिसाल के तौर पर, नागरिकों के समावेशन या नागरिकों के अधिकारों को और पुष्ट करने के लिए क्या किया जा सकता है।

इन स्वाभाविक सीमाओं के बावजूद राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना से सेवा डिलीवरी के डिजिटलीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण शुरुआत जरूर हुई थी।

(क) पूरे देश में साझा सेवा केंद्रों (कॉमन सर्विस सेंटर्स) की स्थापना शुरू हुई ताकि देश की सभी 2,50,000 पंचायतों में निजी-सार्वजनिक साझेदारी मॉडल के तहत लोक सूचनाओं तथा सेवा डिलीवरी के लिए ग्रामीण स्तर पर केंद्र खोले जा सकें। डिजिटल सेवाओं के क्रियान्वयन की सफलता के लिए इन साझा सेवा केंद्रों को अनिवार्य माना गया क्योंकि ये केंद्र ग्रामीण इलाकों के नागरिकों के लिए कनेक्टिविटी तथा संबंधित डिजिटल सेवाओं का एक महत्वपूर्ण माध्यम हो सकते थे। यह भी तय किया गया कि ये केंद्र जो भी ई-सेवाएं मुहैया कराएंगे उसके लिए शासन और नागरिक के बीच होने वाले हर आदान-प्रदान पर एक कमीशन लेंगे जिससे इन केंद्रों का खर्चा खुद चलता रहे। इन केंद्रों को डीटीपी तथा अन्य व्यवसायिक सेवाओं के जरिए अतिरिक्त आय जुटाने की भी छूट दी गई। इस योजना के बारे में और अधिक विवरण तथा इस योजना का क्या हुआ, इसके बारे में आप प्रश्न 9 को देख सकते हैं।

(ख) देश के सभी निवासियों के लिए एक बायोमीट्रिक-आधारित पहचान प्रणाली तैयार करने के लिए आधार/यूनीक आईडेंटीफिकेशन कार्ड (यूआईडी - विशिष्ट पहचान पत्र) की योजना शुरू की गई ताकि कल्याण सेवाओं को उन लोगों पर केंद्रित किया जा सके जिन्हें उनकी जरूरत है और जालसाजों को विभिन्न योजनाओं व सेवाओं का लाभ लेने से रोका जा सके। इस दिशा में क्या प्रगति हुई, यह जानने के लिए प्रश्न 6 को देखें।

राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना ने ई-गवर्नेंस को निश्चय ही एक बड़ा प्रोत्साहन दिया मगर अभी भी इसके क्रियान्वयन में बहुत सारी खामियां बची हुई थीं :

(क) इस योजना से कुछ राज्यों के कुछ विभागों में डिजिटल सेवाओं के अभिनव मॉडल तैयार हुए मगर पूरे देश में डिजिटलाइज्ड सेवा डिलीवरी की व्यवस्था विकसित नहीं हो पाई। इसकी एक बड़ी वजह यह थी कि मानवीय प्रक्रियाओं के स्थान पर डिजिटल प्रक्रियाएं स्थापित करने के लिए कोई स्पष्ट समयसीमा और लक्ष्य तय नहीं किए गए थे। दूसरी वजह यह थी कि इलेक्ट्रॉनिक सेवा डिलीवरी के लिए एक साझा मंच विकसित करने की दिशा में प्रगति बहुत धीमी रही - विभिन्न मंचों की स्थापना और विभिन्न एजेंसियों के पास उपलब्ध डेटा के आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के लिए कोई तकनीकी मानक तय नहीं किए गए थे।

(ख) ग्रामीण इलाकों में बुनियादी कनेक्टिविटी की समस्या बनी रही जिसके चलते साझा सेवा केंद्र तेजी से आगे नहीं बढ़ पाए। इसका परिणाम यह हुआ कि गरीबों में इन सेवाओं का इस्तेमाल बहुत सीमित ही रहा।

5.2 डिजिटल भारत

राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना की खामियों को दूर करने और पूरे देश में ई-गवर्नेंस की एक नई रूपरेखा तैयार करने के लिए जुलाई 2014 में *डिजिटल भारत* या *डिजिटल इंडिया* के नाम से एक नया कार्यक्रम शुरू किया गया। जहां एक तरफ राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना केवल ई-सेवाओं तक ही सीमित थी वहीं दूसरी तरफ डिजिटल भारत कार्यक्रम में ई-गवर्नमेंट व्यवस्था के तीनों मुख्य तत्वों (सेवा डिलीवरी, नागरिकों द्वारा सेवाओं का प्रयोग व सहभागिता, तथा कनेक्टिविटी की व्यवस्था) को एक साथ जोड़ दिया गया था। यहां इस बात को रेखांकित करना जरूरी है कि डिजिटल भारत के कुछ हिस्से राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना के तहत शुरू किए गए पुराने प्रयासों का ही अगला कदम हैं जबकि कुछ पहलू बिल्कुल नए हैं। डिजिटल भारत कार्यक्रम एक दीर्घकालिक विजन दस्तावेज है जिसमें यह बताया गया है कि ई-गवर्नेंस संबंधी प्रयासों का अंतिम लक्ष्य क्या होना चाहिए - "भारत को डिजिटल स्तर पर एक सशक्त समाज एवं अर्थव्यवस्था में रूपांतरित करना।"

डिजिटल भारत विजन के तीन हिस्से हैं :

(1) प्रत्येक नागरिक को एक मूल उपयोगिता के तौर पर डिजिटल ढांचा मुहैया कराना। इसमें निम्नलिखित पहलू शामिल हैं :

- एक राष्ट्रीय ब्रॉडबैंड नेटवर्क के माध्यम से सभी नागरिकों को उच्च रफ्तार इंटरनेट कनेक्टिविटी मुहैया कराना।

- साझा सेवा केंद्रों तक पहुंच (जिसका ब्यौरा प्रश्न 9 में दिया गया है)।
- सरकार व नागरिकों के बीच आदान-प्रदान में नागरिकों की सही पहचान सुनिश्चित करने के लिए *आधार कार्यक्रम* के जरिए 'गर्भ से कब्र' तक एक डिजिटल पहचान सुनिश्चित करना। यह कार्यक्रम लक्ष्य-केंद्रित राष्ट्रव्यापी कल्याणकारी डिलीवरी व्यवस्था का आधार हो सकता है (इसका और ब्यौरा प्रश्न 6 में देखें)।
- सभी नागरिकों को डिजिटल और आर्थिक समावेशन के लिए मोबाइल फोन और बैंक खातों तक पहुंच प्रदान करना।

(2) 'मांग के अनुसार' सेवाएं सुनिश्चित करना। इसके निम्नलिखित पहलू मुख्य हैं :

- ऑनलाइन तथा मोबाइल प्लेटफॉर्म्स से तत्काल सेवाओं की उपलब्धतता सुनिश्चित करना।
- विभिन्न विभागों या कार्यक्षेत्रों में सेवाओं का सहज समेकन।
- आर्थिक विनिमय को इलेक्ट्रॉनिक तथा नकदी मुक्त बनाना।

(3) निम्नलिखित उपायों के माध्यम से नागरिकों का डिजिटल सशक्तिकरण :

- सार्वभौमिक डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना।
- नीतिगत प्राथमिकताओं को निर्धारित करने में नागरिक सहभागिता को प्रोत्साहित करने हेतु एक डिजिटल पोर्टल तैयार करना (MyGov पोर्टल)
- डिजिटल भारत के बारे में विस्तृत जानकारियों के लिए http://digitalindia.gov.in/content/vision-and-vision-areas लॉग-ऑन करें।

5.3 डिजिटलीकरण तथा लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व

लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व का मतलब यह है कि नागरिक अपने अधिकारों की सुरक्षा व प्रोत्साहन के लिए अपनी सरकार से जबाव मांग सकें। इन अधिकारों में नागरिकों की सामाजिक-राजनीतिक स्वतंत्रताओं से संबंधित अधिकार और सामाजिक-आर्थिक अधिकार (जैसे भोजन का अधिकार, आजीविका का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार आदि), सभी शामिल हैं। देश के कानून के अनुसार विभिन्न कल्याणकारी लाभों की डिलीवरी के लिए सरकार से जबाव मांगना भी लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व का हिस्सा है।

लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व को निम्नलिखित प्रक्रियाओं के माध्यम से लागू किया जाता है :

- ऐसे विधायी और नीतिगत उपाय जो सरकार की कार्यकारी शाखा की शक्तियों को जांच सकें और उन पर अंकुश रख सकें।
- ऐसी शासकीय संस्कृति विकसित करना जो नागरिकों की व्यक्तिगत एवं सामूहिक कार्रवाइयों के लिए मददगार हो। इसमें शिकायतों को व्यक्त करना, कल्याण योजनाओं की डिलीवरी की ऑडिटिंग करना, लोक नीति से संबंधित फैसलों को तय करना आदि शामिल हैं।

इस दृष्टिकोण से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि शासन प्रक्रिया का डिजिटलीकरण सिर्फ तकनीकी कवायद भर नहीं है। यह लोकतंत्र को गहराई प्रदान की एक दीर्घकालिक चेष्टा भी है। जब हम इस दृष्टि से भारत में शासन के डिजिटलीकरण के मुख्य रुझानों पर नजर डालते हैं तो निम्नलिखित चिंताएं भी सामने आती हैं :

(1) विभिन्न सेवाओं पर नागरिकों के अधिकारों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा है। आधार-केंद्रित कल्याण सेवा डिलीवरी को अपनाने में संस्थागत एवं तकनीकी खामियां अभी भी सेवाओं पर नागरिकों के अधिकारों को कमजोर बना रही हैं। इस पर प्रश्न 6 में और विस्तार से चर्चा की गई है। विभिन्न डिजिटल कल्याण व्यवस्थाओं का लाभ लेने के लिए नागरिकों की समस्याओं व कठिनाइयों की सुनवाई व समाधान की व्यवस्था अभी भी सहज और समग्र नहीं है।

(2) नागरिकों द्वारा निगरानी की व्यवस्था विकसित करना अभी भी हमारी प्राथमिकता नहीं है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (नरेगा) और सार्वजनिक वितरण व्यवस्था (पीडीएस) जैसी कुछ योजनाओं में नागरिकों द्वारा निगरानी की डिजिटल संभावनाओं की पड़ताल की गई है। नरेगा के तहत सामाजिक ऑडिट के लिए डिजिटल एमआईएस तथा कुछ राज्यों में पीडीएस के तहत राशन लेकर रवाना होने वाले ट्रकों की रवानगी के बारे में नागरिकों को सूचना देने के लिए भेजे जाने वाले एसएमएस अलर्ट्स की व्यवस्था से इन योजनाओं में पारदर्शिता और सेवा डिलीवरी में सुधार आया है। मगर ये अभी भी केवल इक्का-दुक्का उदाहरण हैं और इन योजनाओं में भी इन नए आईसीटी प्रयोगों का सुनियोजित ढंग से लाभ उठाने और लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व में सुधार लाने के लिए स्थानीय प्रयोगों की कमी दिखाई देती है।

(3) MyGov पोर्टल नागरिकों की शासन के साथ सक्रियता को बढ़ाने के लिए शुरू किया गया है मगर इसमें भी नागरिकों की चिंताओं पर प्रतिक्रिया देने और कार्रवाई करने के लिए कोई ठोस, समयबद्ध प्रक्रिया तय नहीं की गई है। अभी भी ऐसी कोई कानूनी गारंटी या नीतिगत दिशानिर्देश नहीं हैं जो यह तय कर सकें कि सरकारी एजेंसियां नागरिकों के साथ संवाद के लिए और विभिन्न मुद्दों पर काम करने के लिए इस पोर्टल का किस तरह इस्तेमाल कर सकती हैं। फलस्वरूप, अभी भी यह सरकारी घोषणाओं के लिए एक ढीला-ढाला माध्यम ही है जिसका बहुत थोड़े से लोग जनमत को व्यक्त करने के लिए इस्तेमाल करते हैं। कुल मिलाकर यह पोर्टल नागरिकों को 'सुने जाने का अधिकार' प्रदान करने की दिशा में केंद्रित नहीं है। यह पोर्टल आबादी के बहुलांश से जुड़ने और उनकी आकांक्षाओं व मुद्दों को अभिव्यक्ति देने में विफल रहा है।

6. आधार क्या है? सेवा डिलीवरी में इसके प्रयोग के क्या निहितार्थ रहे हैं?

आधार/यूनीक आईडेंटीफिकेशन नम्बर प्रॉजेक्ट (विशिष्ट पहचान संख्या परियोजना) एक राष्ट्रव्यापी पहचान व्यवस्था विकसित करने के लिए शुरू की गई है। इसमें देश के प्रत्येक निवासी को 12 अंकों की एक पहचान संख्या दी जाती है जो उसकी बायोमीट्रिक और आधारभूत जनसांख्यिकीय सूचनाओं से जुड़ी होती है।

इस परियोजना में निम्नलिखित सूचनाओं को दर्ज किया जाता है :

- बायोमीट्रिक : दस फिंगरप्रिंट्स यानी उंगलियों के निशान, दोनों आंखों की पुतलियों का स्कैन, चेहरे का फोटो।
- जनसांख्यिकीय विवरण : नाम, जन्म की तारीख (सत्यापित) या आयु (घोषित), लिंग, पता, मोबाइल नम्बर (वैकल्पिक) तथा ई-मेल (वैकल्पिक)।

आधार परियोजना के पीछे इरादा यह है कि एक ऐसी देशव्यापी पहचान व्यवस्था विकसित की जाए जो कल्याण सेवाओं की लक्ष्य-केंद्रित डिलीवरी को और ज्यादा कुशल बना सके। यहां इस बात को रेखांकित करना जरूरी है कि आधार सिर्फ व्यक्तिगत पहचान की पुष्टि की प्रक्रिया है। अगर आपके पास आधार कार्ड है तो इससे यह तय नहीं होता कि आपको कल्याणकारी योजनाओं के लाभ मिल ही जाएंगे। न ही यह आपकी नागरिकता का सुबूत है। इस परियोजना में सभी नागरिकों को शामिल करने और इस पहचान डेटाबेस की रचना व रखरखाव के लिए सरकार ने यूनीक आईडेंटीफिकेशन अथॉरिटी ऑफ इंडिया (यूआईडीएआई) का गठन किया है।

फिलहाल देश की 97 प्रतिशत आबादी का आधार परियोजना के तहत पंजीकरण हो चुका है और सेवा डिलीवरी व्यवस्था में आधार को दो तरीकों से इस्तेमाल किया जा रहा है :

(1) बायोमीट्रिक पुष्टि पर आधारित भौतिक सहभागिता (बायोमीट्रिकली ऑथेंटिकेटेड फिजिकल अपटेक)। इसका मतलब यह है कि विभिन्न लाभान्वित उसी तरह विभिन्न और/या सब्सिडीयुक्त वस्तुएं लेते रहेंगे जैसे वे अब तक लेते रहे हैं मगर अब उन्हें ये लाभ तभी मिलेंगे जब बायोमीट्रिक पहचान पुष्टि प्रक्रिया के माध्यम से उनकी पहचान की पुष्टि कर ली जाएगी। इसके लिए उनके आधार नम्बर के सहारे उनके फिंगरप्रिंट्स और पुतलियों की छाप का मिलान किया जाएगा। इससे यह पता लगाया जा सकता है कि 'जो व्यक्ति लाभ लेने आया है वह वाकई वही व्यक्ति है जिसका आधार डेटाबेस में उल्लेख किया गया है या यह कोई अन्य व्यक्ति है।' कुछ राज्यों में पीडीएस के जरिए अनाज की डिलीवरी के लिए यह व्यवस्था लागू कर दी गई है।

(2) लाभान्वितों के आधार से संबंधित बैंक खातों में प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर)। इसके लिए सरकार जेएएम नाम की व्यवस्था अपनाती है जिसका पूरा नाम है जनधन-आधार-मोबाइल नम्बर योजना। इस जनधन योजना के तहत देश के प्रत्येक परिवार के अधिकतम दो व्यक्ति जीरो बैलेंस यानी न्यूनतम जमा राशि के बिना बैंक खाता खोल सकते हैं। ये बैंक खाते आवेदक के आधार कार्ड और उसके मोबाइल नम्बर से जुड़े होते हैं। इसके पीछे सोच यह है कि आधार को एक पहचान पुष्टि साधन के रूप में इस्तेमाल करते हुए लाभान्वितों को मिलने वाली सब्सिडी/लाभ सीधे उनके खातों में स्थानांतरित कर दिए जाएं। एलपीजी सब्सिडी के भुगतान के लिए फिलहाल यही व्यवस्था अपनाई जा रही है।

बदलाव की इस प्रक्रिया में कल्याणकारी सेवाओं के दायरे से बहुत सारे लोग छूट भी गए हैं :

(1) विभागीय स्तर पर लाभान्वितों के डेटाबेस की आधार सीडिंग में जो कमियां रही हैं उसकी वजह से बहुत सारे लोगों को वे लाभ भी नहीं मिल पा रहे हैं जो उन्हें मिलने चाहिएं। उदाहरण के लिए, पेंशन डेटाबेस के डिजिटलीकरण में कई लोगों के आधार नम्बर गलत दर्ज हो गए हैं जिसके चलते बहुत सारे लोगों की वृद्धावस्था पेंशन बंद हो गई है। इसी प्रकार, कई गरीब परिवारों के आधार नम्बर किसी दूसरे परिवार के राशन कार्ड के साथ दर्ज कर दिए गए हैं जिससे बहुत सारे बीपीएल परिवारों को भी इस श्रेणी के लिए निर्धारित लाभ नहीं मिल पा रहे हैं।

(2) बायोमीट्रिक तकनीक की कमियों के कारण बहुत सारे लोगों के फिंगरप्रिंट्स का मिलान नहीं हो पा रहा है। उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश में सामाजिक सुरक्षा पेंशन (एसएसपी) तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) की विश्लेषण रिपोर्टों से पता चलता है कि यहां "बायोमीट्रिक मिलान न होने" की वजह से 20 प्रतिशत तक की विफलता पाई गई है। इसका मतलब यह है कि हर पांच में से एक व्यक्ति के फिंगरप्रिंट्स की पुष्टि नहीं हो पा रही है। इसी तरह, झारखंड में यूएनडीपी द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि नरेगा योजना के तहत आधार नम्बर के इस्तेमाल के बाद पहली बार में केवल 4 प्रतिशत लाभान्वितों के फिंगरप्रिंट्स का ही सफलतापूर्वक मिलान हो पाया है। मजदूर किसान शक्ति संगठन द्वारा स्थानीय स्तर पर किए गए सर्वेक्षणों से पता चला है कि राजस्थान की पीडीएस व्यवस्था में भी बायोमीट्रिक पुष्टि की विफलता दर बहुत ऊंची है।

(3) डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण) के लिए तैयारी की कमी भी एक समस्या है। इसके पीछे ग्रामीण इलाकों में बैंकिंग ढांचे की कमजोर स्थिति एक मुख्य कारण है। ग्रामीण गरीबों के बैंक खाते खोलने के लिए जनधन योजना के तहत किए गए प्रयासों के बावजूद देश भर में बचत खातों का प्रसार अभी भी बहुत कम है। कुल मिलाकर औसतन केवल 46 प्रतिशत लोगों के ही खाते खुल पाए हैं। महज 27 प्रतिशत गांव ऐसे हैं जहां 5 किलोमीटर के दायरे के कोई बैंक शाखा मौजूद है।

(4) तकनीकी दोषों के कारण किसी भी नागरिक को उसके लिए निर्धारित लाभों से वंचित न किया जाए, यह सुनिश्चित करने के लिए आधार-केंद्रित सेवा डिलीवरी के लिए एक विधायी/नीतिगत व्यवस्था अभी भी विकसित नहीं हो पाई है। आधार अधिनियम के भाग 7 में केंद्र एवं राज्य सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे कंसॉलिडेटेड फंड ऑफ इंडिया (भारतीय समेकित निधि) से वित्तपोषित किसी भी सब्सिडी/सेवा/लाभ के लिए आधार नम्बर के सहारे पहचान के प्रावधान को अनिवार्य बना सकते हैं। मगर, इसमें ऐसा कोई स्पष्ट निर्देश नहीं दिया गया है कि राज्य सरकारों को सेवा डिलीवरी संबंधी विफलताओं के मामले में क्या वैकल्पिक व्यवस्था अपनानी चाहिए।

(5) अभी भी हमारे पास शिकायत सुनवाई की एक ऐसी स्वतंत्र व्यवस्था नहीं है जहां नागरिक आधार से संबंधित सेवाओं की डिलीवरी के मामले में अपनी शिकायतें दर्ज करा सकें। मौजूदा आधार अधिनियम के अनुच्छेद 23 (2)(एफ) में केवल यह कहा गया है कि समस्याओं के निपटारे के लिए यूआईडीएआई आवश्यकता के अनुसार ब्लॉक स्तर पर कोई व्यवस्था विकसित कर सकती है।

(7) कुछ लोग ऐसा क्यों कहते हैं कि आधार परियोजना लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व का हनन करती है?

(1) पहली बात यह है कि आधार परियोजना किसी संसदीय सहमति के बिना लागू की गई थी। प्राइवेसी और डेटा सुरक्षा के बारे में किसी दमदार कानून के अभाव में एक राष्ट्रव्यापी बायोमीट्रिक एवं जनसांख्यिकीय सूचना डेटाबेस तैयार करने के लिए सिर्फ एक 'कार्यकारी' फैसला काफी नहीं था। आधार अधिनियम तब पारित किया गया जब 95 प्रतिशत आबादी को इस परियोजना के भीतर पंजीकृत किया जा चुका था। इसके बाद भी संसद में आधार अधिनियम को एक धन विधेयक के

रूप में ही पारित किया गया था।[4] सरकार ने इस कानून को धन विधेयक के रूप में पारित करने का फैसला इसलिए लिया क्योंकि उसके पास राज्य सभा में इस कानून के लिए पर्याप्त समर्थन नहीं था। धन विधेयकों को केवल लोक सभा में ही पारित किया जाता है। राज्य सभा के पास धन विधेयकों में संशोधन का कोई अधिकार नहीं होता। इस प्रकार, आधार परियोजना जनप्रतिनिधियों की पूर्ण सहभागिता व स्वीकृति के बिना लागू बिना शुरू की गई और अभी भी लागू की जा रही है और लिहाजा यह राजनीतिक उत्तरदायित्व की व्यवस्था की अवहेलना है।

(2) आधार परियोजना के पीछे कोई प्राइवेसी संबंधी प्रावधान या डेटा संरक्षण कानून नहीं है। इसके अलावा, आधार अधिनियम में इस पर भी कोई पाबंदी नहीं लगाई है कि आधार का इस्तेमाल कौन कर सकता है और किस काम के लिए कर सकता है। इन दो पहलुओं को एक साथ रखकर देखने पर सरकार तथा कॉर्पोरेट ताकतों द्वारा लोगों के जीवन पर निगरानी की आशंका पैदा हो जाती है जो नागरिकों के अधिकारों की अवहेलना है। इसका ब्यौरा नीचे दिया गया है :

(क) सरकार द्वारा निगरानी का खतरा : आधार अधिनियम में यूआईडीएआई डेटाबेस में जमा जनसांख्यिकीय एवं बायोमीट्रिक सूचनाओं तक पहुंच को सीमित रखा गया है मगर इस निषेध के दो व्यापक अपवाद भी हैं जिनके चलते सरकार द्वारा नागरिकों पर निगरानी की भारी आशंका अभी भी बनी हुई है। ये दो अपवाद इस प्रकार हैं :

- जिला जज पारित करके सरकारी विभागों को संबंधित नागरिकों को किसी भी तरह चर्चा के बिना या इस बारे में कोई भी सूचना दिए बिना आधार संबंधी डेटा का इस्तेमाल करने का आदेश दे सकते हैं। इस तरह के फैसले के खिलाफ अपील का कोई विकल्प नहीं है।

- 'राष्ट्रीय सुरक्षा' के नाम पर सरकार द्वारा प्राधिकृत कोई भी संयुक्त सचिव स्तरीय अधिकारी संबंधित सूचनाओं को उजागर करने का आदेश दे सकता है। इन आदेशों की समीक्षा केवल कार्यपालिका के प्रतिनिधियों को लेकर बनाई गई समिति द्वारा ही की जा सकती है और लिहाजा इस तरह के आदेशों पर किसी भी तरह की स्वतंत्र न्यायिक जांच या निगरानी की व्यवस्था नहीं है।

(ख) कॉर्पोरेट निगरानी का खतरा : यूआईडीएआई ने आधार पुष्टि के प्रोग्रामिंग इंटरफेस को पब्लिक डोमेन में रखा है और उद्यमियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया है कि वे ऐसे ऐप विकसित करें जो इस प्लेटफॉर्म का प्रयोग करके लोगों की पहचान की पुष्टि और पृष्ठभूमि की जांच (खासतौर से संभावित कर्मचारियों की पृष्ठभूमि की जांच, अनौपचारिक रोजगार के लिए आवेदन देने वालों के आपराधिक रिकॉर्ड्स की जांच आदि के लिए) कर सकें। नागरिकों की पृष्ठभूमि की जांच के लिए तैयार किए गए इस तरह के कॉर्पोरेट समाधानों - जैसे TrustID तथा OnGrid - का आधार प्लेटफॉर्म पर दिखाई पड़ना व्यापक और निजी निगरानी का रास्ता खोल देता है जो किसी कानून के दायरे में नहीं आते!

(3) आधार परियोजना कल्याणकारी व्यवस्था की नागरिकों को प्राप्त गारंटी की अवहेलना करती है जिस पर पीछे प्रश्न 6 में चर्चा की गई थी।

8. मैंने सुना है कि आधार परियोजना एक क्रांतिकारी आर्थिक व्यवस्था विकसित कर रही है जिसमें गरीबों और बिना बैंक खाते वाले लोगों का समावेशन किया जा सकता है और प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण की एक मुक्कमल व्यवस्था लागू की जा सकती है। क्या यह सच है?

पहचान की पुष्टि तथा नकद हस्तांतरण की डिलीवरी के लिए जनधन-आधार-मोबाइल नम्बर व्यवस्था के साथ-साथ यूआईडीएआई प्रमाणन प्राधिकरण नियंत्रक (कंट्रोलर ऑफ सर्टिफाइंग ऑथोरिटीज), इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिक मंत्रालय तथा भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम (नैशनल पेमेंट कॉपोरेशन ऑफ इंडिया) के साथ मिलकर ऐसे डिजिटल उपकरण तैयार कर रहा है जो भौतिक उपस्थिति के बिना, कागजी कार्रवाई के बिना और नकदी के बिना आर्थिक लेनदेन को सुगम बना सकते हैं। इन प्रयासों को **'इंडिया स्टैक'** का नाम दिया गया है। यह व्यवस्था वित्तीय विनिमयों को किस तरह क्रांतिकारी रूप से बदलने वाली है, इसका ब्यौरा नीचे दिया गया है :

(1) भौतिक जांच और पुष्टि के बिना अब लोग अपने आधार नम्बर के सहारे बैंक खाते खोल सकते हैं। ई-नो योर कस्टमर ऐप्लीकेशन बैंकों को इस बात की सुविधा देती है कि वह खाता खोलने के लिए जमा कराए गए आवेदन की जांच कर सके। यह जांच आवेदक की उपस्थिति के बिना भी की जा सकती है। इस तरह यह 'उपस्थितिहीन' बैंकिंग होगी।

(2) एक माउस का बटन दबाकर आप बैंक खातों में पैसा भेज सकते हैं या स्थानांतरित कर सकते हैं। इस प्रकार के 'कागज रहित' विनिमय में बैंकिंग आदान-प्रदान भी ई-मेल भेजने जैसा आसान हो जाता है। ई-सिगनेचर तथा यूनिफाइड पेमेंट इंटरफेस जैसे नए ऐप्लीकेशन भी इसी काम के लिए तैयार किए गए हैं।

(3) आधार पेमेंट ग्रिड सिस्टम के जरिए आर्थिक विनिमय 'नकदी रहित' हो जाते हैं। भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम द्वारा तैयार की गई यह सुविधा लोगों को अपने आर्थिक पते के रूप में अपने आधार नम्बर का इस्तेमाल करने की छूट देती है। इसका मतलब यह है कि जिस तरह पहले लोग किसी भी पते पर डाकखाने से मनीऑर्डर भेज सकते थे उसी तरह अब वे किसी भी आधार नम्बर पर पैसा भेज सकते हैं।

इंडिया स्टैक के रचनाकार इसे आर्थिक सेवाओं में एक 'विप्लवकारी' तकनीक मानते हैं। उनकी राय में यह एक ऐसी तकनीक है जो पुरानी पद्धति से बिल्कुल अलग है और लोगों को नए व आसान समाधान मुहैया कराती है। खासतौर से उनका मानना यह है कि इंडिया स्टैक से देश के गरीबों और बिना बैंक खातों वाले लोगों को औपचारिक आर्थिक एवं ऋण क्षेत्र में दाखिल होने का अभूतपूर्व अवसर मिलेगा। उनको लगता है कि इंडिया स्टैक द्वारा जो 'उपस्थितिहीन, कागजहीन, तथा नकदीहीन' ढांचा तैयार किया गया है वह आर्थिक विनिमयों की लागत को कम करता है और इस तरह ऐसे नए आर्थिक मध्यस्थों (फिनटेक कंपनियों) के उदय को प्रोत्साहित करता है जो इंडिया स्टैक ऐप्लीकेशन के सहारे आर्थिक सेवाएं मुहैया करा सकती हैं। यह व्यवस्था उन लोगों को लाभ पहुंचाएगी जिनके आर्थिक लेनदेन बहुत छोटे हैं। इसके अलावा, उनका यह भी मानना है कि यह ढांचा प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण को पूरी तरह दोषमुक्त ढंग से लागू कर सकता है।

इन दावों की विभिन्न विशेषज्ञों द्वारा पेश की गई निम्नलिखित आलोचनाओं की रोशनी में जांच करना जरूरी है :

(1) फिनटेक कंपनियां 'बॉटम ऑफ दि पिरामिड' यानी समाज के सबसे निर्धन तबके की साधारण आय पर निगाहें गड़ाए हुए हैं। ये कंपनियां सूक्ष्म ऋण मुहैया कराने के लिए अपने ग्राहक ढूंढ़ती हैं। ऐसे में यह साफ नहीं है कि इस तरह की सेवाएं वाकई आर्थिक समावेशन में मददगार होंगी या नहीं। इसके विपरीत, देश में सूक्ष्म वित्त की अनियंत्रित व्यवस्था के अभी तक के अनुभवों से यही पता चलता है कि हमारे देश के गरीब लगातार और ज्यादा कर्जे में फंसते जा रहे हैं।

(2) इंडिया स्टैक के तहत तैयार किया गया आधार पेमेंट ब्रिज सिस्टम आर्थिक विनिमय के ऑडिट को लगभग असंभव बना देता है। यह व्यवस्था केवल अलग-अलग आधार नम्बरों के बीच होने वाले विनिमय को दर्ज करती है न कि उन्हीं आधार नम्बरों के साथ संबद्ध अलग-अलग बैंक खातों के बीच होने वाले विनिमयों को। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि ऐसे में बहुत सारे लोग फर्जी बैंक खाते भी खोल सकते हैं। आधार नम्बर और उनके बीच पैसे का आवागमन किसी भी तरह पकड़ में आने से बच सकता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि आधार पेमेंट ब्रिज प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण के नाम पर किए गए वित्तीय विनिमय और अन्य विनिमयों में फर्क नहीं करता। इसका परिणाम यह होता है कि सरकारी धन की करोड़ों रुपयों की राशियों वाले प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण का किसी भी तरह का ऑडिट असंभव हो जाता है।

9. साझा सेवा केंद्र क्या होते हैं?

साझा सेवा केंद्र (कॉमन सर्विस सेंटर) योजना ग्रामीण भारत में 2,50,000 स्थानीय सेवा डिलीवरी केंद्र स्थापित करने के लिए शुरू की गई है। यह योजना सार्वजनिक-निजी साझेदारी के मॉडल पर आधारित है और इसमें तीन पक्ष होंगे :

- सरकार द्वारा नामांकित संस्था (स्टेट डेज़ीगनेटेड एजेंसी - एसडीए), यानी योजना का संचालन करने वाला सरकारी विभाग।
- सेवा केंद्र एजेंसी (सर्विस सेंटर एजेंसी - एससीए) - यह राज्य के एक या अधिक क्षेत्रों में फ्रेंचाइजी मॉडल के आधार पर सेवा डिलीवरी केंद्रों को चलाने के लिए प्रतिस्पर्धी बोली के आधार पर एसडीए द्वारा चुनी गई कोई निजी कंपनी होगी।

- ग्राम स्तरीय उद्यमी (विलेज लेवल आन्ट्रप्रन्यर - वीएलई) जो स्थानीय स्तर पर सेवा डिलीवरी केंद्रों को चलाएंगे और उनके चयन व प्रशिक्षण का जिम्मा एससीए के पास होगा।

इस पूरी व्यवस्था पर नजर रखने का जिम्मा सीएससी ई-गवर्नेंस सर्विसेज इंडिया लिमिटेड को सौंपा गया है। इसे एक निजी कंपनी के रूप में गठित किया गया है जिसमें राज्य सरकारें और एससीए मुख्य पक्ष हैं। सीएससी ई-गवर्नेंस सर्विसेज इंडिया लिमिटेड का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सीएससी व्यवस्था आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो और उसके क्रियान्वयन पर लगातार नजर रखी जा सके।

वीएलई और एससीए से उम्मीद की जाती है कि वे सरकारी सेवाओं पर कमीशन और निजी सेवाओं के माध्यम से इतनी आय अर्जित करने लगेंगे कि उन्हें आर्थिक सहायता की आवश्यकता न रहे।

इस योजना का क्रियान्वयन अभी तक एकसमान नहीं रहा है। कुछ राज्यों में सीएससी काफी अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं। इसके पीछे एससीए से उत्तरदायित्व मांगने की एसडीए की क्षमता, सेवा डिलीवरी गेटवे की तत्परता और स्थानीय स्तर पर कनेक्टिविटी का स्तर आदि मुख्य कारक हैं जो इन केंद्रों के प्रदर्शन का प्रभावित करते हैं।

जिन राज्यों में सीएससी शुरू हो चुके हैं और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर भी होने लगे हैं वहां भी एक मुख्य समस्या बची हुई है। इस मॉडल में समावेशन की बजाय सेवा डिलीवरी से मुनाफे पर ज्यादा जोर दिया जा रहा है। ऐसे में हो सकता है कि इन केंद्रों को चलाने वाले व्यक्ति गरीबों और हाशियाई तबकों की जरूरतों को प्राथमिकता न दें।

सीएससी नेटवर्क हेतु गरीबों के लिए सब्सिडी के आधार पर सार्वजनिक कनेक्टिविटी तथा सार्वजनिक लाइब्रेरी नेटवर्क की पद्धति भी अपनायी जा सकती थी। मगर फिलहाल एक निजी कंपनी के नेतृत्व पर आधारित इसकी मौजूदा संरचना इसकी सामाजिक उपयोगिता सुनिश्चित करने की बजाय एक नये किस्म के ग्राहकवाद को जन्म दे रही है। पुराने जमाने में स्थानीय बिचौलिये होते थे। आज सीएससी नेटवर्क कॉपरेट सेवाओं के लिए एक ग्रामीण खुदरा नेटवर्क जैसा बन गया है। केरल सरकार द्वारा अपने साझा सेवा केंद्रों (जिन्हें यहां *अक्षय केंद्र* कहा जाता है) के माध्यम से रिलायंस जिओ और पतंजलि के उत्पादों की बिक्री का फैसला इस दिशा में एक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

10. स्मार्ट सिटी क्या है? कुछ लोग ऐसा क्यों मानते हैं कि इससे सामाजिक बेदखली बढ़ेगी?

स्मार्ट सिटी मिशन का मकसद *"ऐसे शहर बनाना है जहां नागरिकों को बुनियादी ढांचा और अच्छा जीवन स्तर मिले, जहां एक स्वच्छ और टिकाऊ वातावरण हो और 'स्मार्ट' समाधानों का इस्तेमाल किया जा सके।"* इस मिशन के तहत ऐसे समाधानों को 'स्मार्ट' समाधान कहा गया है जो शहरी बुनियादी ढांचे और सेवाओं में सुधार के लिए तकनीक, सूचना और डेटा का सदुपयोग करते हों।

इस मिशन की मुख्य रणनीति यह है कि चुनिंदा शहरी इलाकों या कस्बों के बुनियादी ढांचे के पुनर्विकास के लिए निजी निवेश आकर्षित किया जाए और वहां पार्किंग, परिवहन ढांचे, जल एवं स्वच्छता, स्ट्रीट लाईट आदि के लिए नगरव्यापी आईटी आधारित समाधान तैयार किये जाएं। स्मार्ट सिटी गाइडलाइंस में प्रत्येक स्मार्ट सिटी प्रोजक्ट को लागू करने के लिए स्पेशल पर्पज़ व्हीकल (विशेष उद्देश्य वाहन - एसपीवी) की अनिवार्यता पर जोर दिया गया है। एसपीवी दरअसल कंपनी अधिनियम के तहत पंजीकृत एक प्राइवेट कंपनी होगी जिसमें राज्य/संघ शासित प्रदेश और नगर प्रशासन बराबर शेयरहोल्डिंग वाले प्रोमोटर की भूमिका निभाएंगे। गाईडलाइंस में निजी साझीदारों को भी एसपीजी में इक्विटी रखने की छूट दी गयी है बशर्ते राज्य/संघशासित प्रदेश तथा नगर प्रशासन की संयुक्त होल्डिंग निजी साझीदार से ज्यादा रहे।

शोधकर्ता और नागर समाज संगठन के लोग इस योजना की लगातार आलोचना करते रहे हैं।

पहली बात, शहरी बुनियादी ढांचे की नगरव्यापी समस्याओं को हल करने की बजाय शहरों के भीतर ही छोटे-छोटे पॉकेट्स को नये सिरे से विकसित करने पर ज्यादा जोर दिया जारहा है जिसके चलते यह योजना बहुत संकुचित हो जाती है। इसके चलते यह योजना निजी पूंजी पर आधारित आधुनिक बुनियादी ढांचे वाले टापू ही बनाकर रह जाती है और शहरी गरीबों के लिए बुनियादी सेवाओं में सुधार या नगरव्यापी बुनियादी ढांचे की समस्याओं का व्यवस्थागत समाधान मुहैया नहीं कराती।

दूसरी बात, महत्वपूर्ण निर्णयकारी शक्तियां नगरपालिका से एसपीवी के सीईओ के हाथों में सौंप दी जायेंगी। यह प्रावधान शहरी अभिशासन के व्यावसायीकरण की चिंताजनक प्रवृत्ति को जन्म देता है। यह व्यवस्था परस्पर संवाद आधारित परंपरागत निर्णय प्रक्रिया को नजरअंदाज कर देती है।

अंत में, फिलहाल जो नये 'स्मार्ट' समाधान सुझाये जा रहे हैं वे शहरी नियोजन के क्षेत्रों में तैयारशुदा तकनीक आधारित समाधान मुहैया करा रहे हैं जिससे बहुराष्ट्रीय इंटरनेट कंपनियों का ही विस्तार होगा क्योंकि उन्हें शहरी अभिशासन के दायरे में एक नया बाजार मिल जायेगा। दुनिया के अन्य भागों में किये गये इस तरह के पिछले प्रयोगों को देखते हुए भारत के लिए एक और खतरा पैदा हो जाता है - नगर प्रशासन के लिए 'स्मार्ट' समाधानों का विकास करने वाले निजी प्रदाताओं द्वारा सार्वजनिक डेटा के नियंत्रण और आधारभूत लोक सेवाओं के स्थान पर निजी नियंत्रण वाली सेवाओं की स्थापना का खतरा। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में परिवाहन विभाग ने सार्वजनिक-निजी साझेदारी के जरिए 'स्मार्ट' परिवहन समाधान सुझाने के लिए एक स्मार्ट सिटीज चैलेंज की घोषणा की है। शहरों के लिए परिवहन तकनीक की रूपरेखा पर काम करने वाले साइडवॉक्स लैब - जो गूगल की एक सहायक कंपनी है - ने इस प्रयास में खासी दिलचस्पी दिखायी है। उसने एक प्लेटफॉर्म भी तैयार किया जो *"परिवाहन के एक बाजार की भूमिका निभायेगा जिसमें भुगतान व्यवस्था और बस, टैक्सी, उबर, लिफ्ट और जिपकार जैसे असंख्य परिवहन विकल्प उपलब्ध होंगे" तथा पार्किंग स्थलों का भी प्रबंधन किया जाएगा।* कुछ विशेषज्ञों को भय है कि जो शहर इस समाधान को अपने परिवहन नेटवर्क में समाहित करेंगे वहां बस सेवाएं खत्म हो सकती हैं क्योंकि इस तरह की व्यवस्था उबर जैसी निजी परिवहन नेटवर्क कंपनियों को ही ज्यादा प्रोत्साहन देगा। कुछ अन्य विशेषज्ञों ने इस बात पर जोर दिया है कि यह प्रस्ताव इस शर्त पर आधारित है कि प्रायोगिक शहर "साइडवॉक्स लैब द्वारा सुझाई गयी व्यवस्था के जरिये सभी परिवहन एवं पार्किंग सेवाओं के लिए सब्सिडी दें और भुगतान वसूल करें" और इस तरह शहर को एक इजारेदारी आधारित निजी व्यवस्था में बदल दें। जब इस तरह की कंपनियां किसी सार्वजनिक व्यवस्था को अपने नियंत्रण में ले लेती हैं तो सरकारें या तो सकारात्मक नीतियों (जैसे विकलांगों के लिए विशेष पार्किंग दरें) को लागू करने में विफल हो जाती हैं या उन्हें अपनी सकारात्मक नीतियों के कारण निजी कंपनियों को होने वाले घाटे की भरपाई होने के लिए उन्हें भारी-भरकम भुगतान करने पड़ते हैं।

11. अभिशासन के बिग डेटा के इस्तेमाल के प्रति भारत सरकार का रवैया क्या रहा है?

भारत सरकार ने नीति संबंधी फैसलों के लिए बिग डेटा के इस्तेमाल की संभावनाओं पर काम करना शुरू कर दिया है। हाल ही में राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस डिवीजन ने ऐलान किया है कि वह एक रैपिड असेस्मेंट सिस्टम (तीव्र आकलन व्यवस्था) विकसित करने जा रहा है जिससे अलग-अलग विभागों को विभिन्न सेवाओं के बारे में नागरिकों से एसएमएस आधारित फीडबैक लेने का मौका मिलेगा। इस फीडबैक के आधार पर संबंधित विभाग फॉलोअप कार्रवाई कर सकते हैं। इसी तरह, MyGov प्लेटफॉर्म तथा सोशल मीडिया में नागरिकों द्वारा उपलब्ध कराये गये डेटा के आधार पर बिग डेटा विश्लेषण के जरिये 19 महत्वपूर्ण क्षेत्रों में नीतिगत प्राथिमिकताएं तय करने की प्रक्रिया भी शुरू की जा चुकी है।

इसके अलावा, सरकार द्वारा शुरू की गयी बहुत सारी योजनाओं व परियोजनाओं में भी बिग डेटा आधारित नये रास्ते खोजे जा रहे हैं। उदाहरण के लिए प्रश्न 11 में हमने TrustID और OnGrid जैसे पृष्ठभूमि जांच संबंधी एप्लीकेशंस को देखा था जो आधार पुष्टि प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध हैं। स्मार्ट सिटी मिशन के तहत भी परिवहन, पार्किंग, स्ट्रीट लाइटिंग प्रबंधन के लिए "स्मार्ट" समाधानों की बात कही गयी है।

मगर, अभी तक भारत सरकार ने बिग डेटा के प्रबंधन व सार-संभाल के लिए कोई समग्र नीतिगत व्यवस्था विकसित नहीं की है। इसका परिणाम यह है कि बिग डेटा अभिशासन से सबंधित कई महत्वपूर्ण सवाल अभी भी अनुत्तरित हैं। खासतौर से निम्नलिखित सवाल गौरतलब हैं :

(क) यह कैसे सुनिश्चित किया जाए कि जब सार्वजनिक समस्याओं के लिए बिग डेटा आधारित समाधानों का प्रयोग किया जायेगा तो नागरिकों के प्राइवेसी के अधिकार की अवहेलना नहीं होगी?

(ख) निजी डेटा कंपनी को भारी-भरकम भुगतान करने की बजाय नागरिकों से संबंधित डेटा के सार्वजनिक स्वामित्व और प्रयोग को कैसे सुनिश्चित किया जाए?

(ग) बिग डेटा आधारित समाधानों में निजी हितों पर कैसे अंकुश लगाया जाए?

(घ) बिग डेटा विश्लेषण पर आधारित फैसलों के बारे में नागरिकों के जवाब मांगने के अधिकार की रक्षा कैसे की जाए?

डेटा अभिशासन व प्रबंधन से संबंधित मुख्य सवालों और चिंताओं/मुद्दों के बारे में और ज्यादा विवरण आप यहां देख सकते हैं - http://itforchange.net/mavc/democratic-accountability-in-the-digital-age/resources/

12 डिजिटल अधिकारों का क्या मतलब होता है? ये क्यों महत्वपूर्ण होते हैं?

सभी को सूचना के अपने अधिकार, अभिव्यक्ति और संगठित होने की स्वतंत्रता तथा नयी डिजिटल अर्थव्यवस्था व समाज के लाभों में पूर्ण सहभागिता के अवसर प्रदान करने के लिए इंटरनेट और सूचना व संचार प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के अधिकार को डिजिटल अधिकार का नाम दिया जा सकता है।

हमारे दैनिक जीवन में डिजिटल अधिकारों के गहरे महत्व के असंख्य उदाहरण मौजूद हैं। इंटरनेट और मोबाइल फोन के बिना आज हम डिजिटलीकृत सेवा डिलीवरी व्यवस्था से बाहर खड़े रह जाते हैं। ऐसे में नागरिक साझा सेवा केंद्र ऑपरेटर या बैंकों के व्यावसायिक प्रतिनिधियों जैसे नये बिचौलियों पर और ज्यादा आश्रित हो जाते हैं और वे खुद कल्याणकारी लाभों की प्राप्ति और उपलब्धता पर नजर नहीं रख पाते। इसके अलावा, लोक सहभागिता के ऐसे ऑनलाइन मंचों पर उनकी सहभागिता भी कम रह जाती है जिनके माध्यम से नीतिगत प्राथमिकताएं तय की जा रही हैं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें संचार, नेटवर्किंग, परस्पर सीखने और संगठित होने के ऐसे अवसर नहीं मिल पाते जो इंटरनेट के माध्यम से सहज उपलब्ध हो सकते हैं। कल्पना कीजिए कि मोबाइल फोनों के बिना किसी धरने की योजना बनाना और उसका आयोजन कितना थकाऊ और मुश्किल काम हो सकता है। इसी तरह, ई-मेल या सेल फोन के बिना समर्थन जुटाने की अपील जारी करना कितना मुश्किल हो जाता है।

सामाजिक-राजनीतिक जीवन में पूरी तरह सहभागिता और अपनी आवाज उठाने की क्षमता इंटरनेट की पहुंच के साथ गहरे तौर पर जुड़ी हुई है। इंटरनेट एक महत्वपूर्ण लोक संसाधन है जो अवसरों में समानता लाता है। इससे आर्थिक और सामाजिक नागरिकता की दावेदारी भी पुष्ट होती है। उदाहरण के लिए :

- सम्मानजनक श्रम के अवसरों को विस्तार मिलता है (जैसे, babajobs.com जैसी साइट्स पर नौकरी की तलाश करना, हाथ से चीजें बनाने वाले महिला संगठन का पोर्टल तैयार करना, आदि);
- सामूहिक सूचनाओं, एकजुटता और कारवाई को समर्थन देना (जैसे, ऐसे अन्य नागरिकों को एक साथ जुड़ने के लिए फेसबुक का इस्तेमाल करना जोकि आप ही की तरह शहर की मरती झीलों को बचाने के लिए प्रतिबद्ध हैं);
- सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और ज्ञान सृजन में योगदान देना (जैसे विकीपीडिया पर आपकी स्थानीय विरासत के कला रूपों पर कोई लेख लिखना या स्थानीय मवेशियों की प्रजातियों का अध्ययन करना, यदि आप लोक कलाकार हैं तो अपने दर्शकों के लिए यू-ट्यूब विडियो बनाना); तथा
- दावेदारी और स्थानीय एजेंडा तय करने के लिए न्यूजचैनल तैयार करना (ऑनलाइन सार्वजनिक सूचनाओं का इस्तेमाल करना, लोक सेवाओं तक समय पर पहुंच हासिल करना, स्थानीय शासन के साथ संवाद करना आदि)।

डिजिटल तकनीक और इंटरनेट के विकास संबंधी लाभ और सामाजिक-राजनीतिक स्वतंत्रताओं और सामाजिक-आर्थिक अधिकारों में उनके योगदान के चलते डिजिटल प्रौद्योगिकी और इंटरनेट पूर्ण नागरिकता को साकार करने के लिए आधारभूत महत्व अख्तियार कर लेते हैं। जनगणना, 2011 में बताया गया है कि ग्रामीण इलाकों के जिन गरीब परिवारों का बजट बहुत सीमित है वे भी शौचालय बनाने के मुकाबले मोबाइल फोन पर निवेश करना ज्यादा जरूरी मानते हैं। यानी गरीब भी इस बात को बखूबी समझते हैं कि सरकारी सुविधाओं का लाभ लेने, महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक अवसरों का लाभ उठाने और परिवार व समुदाय के संपर्क में रहने के लिए मोबाइल फोन कितना जरूरी हो गया है।

जैसा कि हम सभी जानते हैं, इंटरनेट और डिजिटल प्रौद्योगिकी तक पहुंच डिजिटल अधिकारों के एजेंडा को साकार करने की दिशा में पहला कदम होता है। जब तक इसके साथ-साथ ऐसे कानूनी और संस्थागत अधिकार न हों जो बहुत ज्यादा अंकुश या

रुकावटों के बिना नागरिकों को डिजिटल संचार नेटवर्कों के इस्तेमाल की क्षमता प्रदान करें तब तक इस पहुंच का कोई ज्यादा मतलब नहीं निकलता। यह बात तब खासतौर से महत्वपूर्ण हो जाती है जब हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हों जहां सरकार और व्यावसायिक जगत, दोनों ही नागरिकों से संबंधित डेटा के संग्रह और विश्लेषण के लिए इन नेटवर्कों की ताकत का जमकर इस्तेमाल कर रहे हैं - ताकि नागरिकों को नियंत्रित कर सकें और अपने बाजारों को विस्तार दे सकें (अधिक विवरण के लिए प्रश्न 2, 3, 6 और 7 को देखें)। लिहाजा, प्राइवेसी का अधिकार, ऑनलाइन बेनाम संचार का अधिकार और जब आपका निजी डेटा सरकार या व्यावसायिक जगत द्वारा इस्तेमाल किया जा रहा हो तो आपको सूचित किये जाने का अधिकार नागरिक स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिए हो जाता है। यह बात बहुत सारे अंतर्राष्ट्रीय नागरिक अधिकार संगठनों ने भी कही है।

मगर जब हम डिजिटल संचार नेटवर्कों के सार्थक प्रयोग की शर्तों के बारे में बात करते हैं तो एक मुद्दा अकसर हमारी पकड़ से छूट जाता है। यह मुद्दा है इंटरनेट पर बनाये गये ऐसे विशाल मीडिया, संचार एवं नेटवर्किंग प्लेटफॉर्मों के स्वामित्व व नियंत्रण का जिनसे बड़े पैमाने पर डेटा पैदा होता है। कम्युनिटी रेडियो आंदोनल के इतिहास से परिचित लोग भली-भांति जानते होंगे कि वास्तव में स्पेक्ट्रम निशुल्क और असीमित होता है मगर जब लाइसेंसिंग से बड़े व्यावसायिक स्टेशनों को फायदा पहुंचता है तो छोटे कम्युनिटी रेडियो स्टेशनों के मुकाबले उन्हें ज्यादा तरजीह दी जाने लगती है। इससे गरीब और हाशियाई समूहों के पास इस बारे में बहुत सीमित नियंत्रण रह जाता है कि वे अपने मुद्दों पर ध्यान खींचने या अपनी पसंद के कार्यक्रम प्रसारित करने के लिए रेडियो का इस्तेमाल कैसे कर सकते हैं। इसी तरह, एक वैश्विक सार्वजनिक वस्तु के रूप में इंटरनेट भी इस संभावना को ध्यान में रखते हुए विकसित किया गया है कि दुनिया का कोई भी कंप्यूटर किसी भी कंप्यूटर से जुड़ सके मगर आज इंटरनेट का एक बहुत बड़ा हिस्सा ऐसी शक्तिशाली इंटरनेट कंपनियों के दबदबे में है जो इन संपर्कों के प्रबंधक बन गयी हैं और फलस्वरूप ऑनलाइन आदान-प्रदान के नतीजों के सामंती स्वामी की तरह बर्ताव करने लगे हैं।

इंटरनेट के शुरुआती दौर में गूगल ने एक अभिनव और दिलचस्प शुरुआत की थी। इस कंपनी की स्थापना के पीछे यह सोच थी कि इंटरनेट प्रयोक्ताओं को इंटरनेट पर अपनी दिलचस्पी के शीर्षकों वाले पृष्ठ आसानी से मिल जाएं और उन्हें तरह-तरह की वेबसाइटों के नाम याद न रखने पड़ें। जैसे आप अनजान ठिकानों के पते जानने के लिए जस्टडायल पर फोन करते हैं उसी तरह गूगल भी आपको आपकी दिलचस्पी वाले मुद्दों/सेवाओं पर केंद्रित वेबसाइट्स पर ढूंढने में मदद देता है। इसके लिए गूगल आपकी जगह, खोज के लिए टाइप किये गये शब्दों और अन्य पहलुओं के आधार पर आपकी खोजों को एक रैंकिंग देती जाती है। मगर गूगल के सर्च एल्गोरिगल यानी खोज के गणित का तरीका अभी भी गुप्त है और किसी को नहीं पता कि पेज रैंकिंग्स में कोई पृष्ठ कैसे ऊपर या नीचे चला जाता है। जब लोग गूगल का इस्तेमाल करते हैं तो वे सूचनाओं को ढूंढने या संपर्क जोड़ने की अपनी क्षमता को छोड़ देते हैं और इसके बाद गूगल के अल्गोरिदम से वही चीजें उन्हें मिलती हैं जो उन्हें गूगल द्वारा सुझाई जा रही हैं। यह चिंताजनक बात है, खासतौर से इस बात को देखते हुए कि बहुत सारे मामलों में गूगल ने अपने हितों की पूर्ति के लिए खोज की रैंकिग्स में हेरफेर भी किये हैं। इसका एक मतलब यह है कि गूगल की खोज रैंकिंग किसी भी वेबसाइट को सफल या विफल बना सकती है और उसे अपने श्रोता व दर्शक ढूंढने में मदद दे सकती है या अवरुद्ध कर सकती है। इसी प्रकार, एमेज़ॉन विक्रेताओं और खरीदारों को एक-दूसरे से आदान-प्रदान का शानदार प्लेटफॉर्म देता है। इसमें परंपरागत बिचौलिये नहीं हैं। मगर अब एमेज़ॉन खुद एक नया बिचौलिया बन गया है। यह वेबसाइट छोटे खुदरा व्यापारियों से भारी-भरकम कमीशन वसूल करती है जिसकी वजह से उनके लिए उनके लिए एमेज़ॉन पर कारोबार करना मुश्किल होता जा रहा है। एक और उदाहरण लें। विकीपीडिया इंटरनेट पर सबसे बड़ा ज्ञानकोश है। इसे वैश्विक इन्साइक्लोपीडिया भी कहा जाने लगा है जोकि दुनिया भर के समुदायों की ज्ञान संबंधी असंख्य आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। मगर अब इसकी संपादकीय नीतियां पश्चिमी दृष्टिकोण से लिखे गये लेखों को तरजीह देने लगी हैं। यहां तक कि स्थानीय भाषा की प्रविष्टियों पर भी इसी बात पर जोर दिया जाता है। इंटरनेट कंपनियां भी डेटा प्लानों पर निशुल्क सामग्री उपलब्ध कराने के लिए दूरसंचार कंपनियों के साथ सौदे कर रही हैं। इसका नतीजा यह होता है कि इंटरनेट पर कुछ सूचनाओं को ज्यादा जगह मिल जाती है। इससे बड़ी कंपनियों को दूसरी कंपनियों के मुकाबले ज्यादा फायदा पहुंचता है।

लिहाजा, नागर समाज की ताकतों को इंटरनेट की संरचना व ढांचे को समझना होगा और यह भी समझना होगा कि डिजिटल कंपनियां अपने पूंजीवादी हितों की पूर्ति के लिए सामाजिक नियंत्रण का किस तरह इस्तेमाल करती हैं। इंटरनेट पर बड़ी कंपनियों (जैसे फेसबुक, गूगल, ट्विटर आदि) की बेलगाम इजारेदारी पर उपयुक्त नियंत्रण जरूरी है ताकि छोटे, जनकेंद्रित प्रयासों को आगे बढ़ाने के लिए इंटरनेट व डिजिटल प्रौद्योगिकी की संभावनाओं का पूरा इस्तेमाल किया जा सके। लोगों को उनके डिजिटल अधिकार देने के लिए इंटरनेट का नियंत्रण ऐसा होना चाहिए कि वैकल्पिक आर्थिक मॉडल, ज्ञान की नयी अवधारणाएं और नयी डेटा व्यवस्थाएं सामने आ सकें और साझा हितों व सामाजिक न्याय को आगे बढ़ाया जा सके। इन चिंताओं का कड़ा विरोध

किया जा रहा है। इंटरनेट का जन्म अमेरिकी रक्षा विभाग की एक परियोजना से हुआ था। इस परियोजना में कंप्यूटर विशेषज्ञों का भी योगदान था जिनमें से ज्यादातर 'नियंत्रण' को एक खराब शब्द मानते हैं जोकि सरकार की दखलंदाजी को बढ़ाता है और नये प्रयोगों का मार देता है। इस गलतफहमी की वजह से विकसित देशों और उनकी कंपनियों को इस बात की छूट मिल गयी है कि वे इंटरनेट को लोकतांत्रिक, वैश्विक अभिशासन की व्यवस्थाओं से बाहर रखें। इंटरनेट को कॉरपोरेट शोषण व सरकारी नियंत्रण का औजार बन जाने से रोकने के लिए नागर समाज की ताकतों को डिजिटल प्रौद्योगिकी के लिए एक ऐसी लोकतांत्रिक अभिशासन व्यवस्था की मांग करनी चाहिए जो सबसे हाशियाई लोगों के डिजिटल अधिकारों की भी रक्षा कर सके।

अंतर्राष्ट्रीय नीतिगत चर्चाओं में डिजिटल अधिकारों का विमर्श लगातार आगे बढ़ा है। इस क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं इस प्रकार हैं :

क. मुख्य विचार – इंटरनेट विकास के अधिकार सहित विभिन्न अधिकारों को सुगम बनाने का माध्यम है		
क्र. सं.	**उपकरण/नीतिगत दस्तावेज**	**मुख्य बिंदु**
1.	सिद्धांतों की घोषणा, सूचना समाज पर विश्व शिखर सम्मेलन, 2003	• सभी को अपने जीवन की गुणवत्ता बेहतर बनाने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी तक पहुंच व प्रयोग की सुविधा मिले।
2.	ट्यूनिस प्रतिबद्धता, विश्व सूचना समाज शिखर सम्मेलन, 2005	• डिजिटल विभाजन को खत्म किया जाए ताकि विकासशील देशों तथा सभी समाजों में आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के परिणामों को पूरी तरह साकार किया जा सके। • आईसीटी तक सार्वभौमिक, सर्वव्यापी, समतापरक और सस्ती पहुंच मुहैया कराई जाए। अंतर्राष्ट्रीय मानकों का पालन किया जाए ताकि विकलांगता वाले लोग भी सूचना प्रौद्योगिकी का पूरी तरह इस्तेमाल कर सकें।
3.	अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा व प्रोत्साहन पर विशेष संवीक्षक की रिपोर्ट, 2011	• चूंकि इंटरनेट बहुत सारे दूसरे अधिकारों को सुगम बनाने का माध्यम है इसलिए प्रत्येक नागरिक को इंटरनेट मुहैया कराना सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए। • सरकारें द्वारा किसी भी आधार पर इंटरनेट को बंद करना सही नहीं ठहराया जा सकता।
4.	टिकाऊ विकास लक्ष्य, 2016	• महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए सुगमतावर्धक प्रौद्योगिकी, विशेष रूप से सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी तक पहुंच बहुत आवश्यक है। • यह सुनिश्चित किया जाए कि 2020 तक न्यूनतम विकसित देशों के नागरिक भी सस्ती इंटरनेट सेवाओं का प्रयोग करने लगें।
5.	इंटरनेट पर मानवाधिकारों की सुरक्षा व प्रोत्साहन पर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् का प्रस्ताव, 2016	• सभी सरकारों को इंटरनेट तक पहुंच के विस्तार व प्रोत्साहन के लिए एक समग्र मानवाधिकार आधारित पद्धति अपनानी चाहिए।
ख. मुख्य विचार – सभी ऑफलाइन अधिकार ऑनलाइन भी लागू किए जाएं।		
1.	इंटरनेट पर मानवाधिकारों की	• सभी ऑफलाइन अधिकारों, खासतौर से अभिव्यक्ति की आजादी के

	सुरक्षा व प्रोत्साहन पर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद् का प्रस्ताव, 2012, 2014 और 2016	अधिकार की ऑनलाइन भी पूरी सुरक्षा की जानी चाहिए।
ग. मुख्य विचार – डिजिटल युग में प्राइवेसी (निजता) का अधिकार		
1.	डिजिटल युग में प्राइवेसी के अधिकार पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का प्रस्ताव, 2013	• खुद को स्वेच्छापूर्वक अभिव्यक्त करने के अधिकार को साकार करने के लिए निजता का अधिकार अनिवार्य है। • डिजिटल संचारों पर गैर-कानूनी और मनमानी निगरानी तथा ऑनलाइन दायरों में निजी डेटा का गैर-कानूनी संग्रह प्राइवेसी के अधिकार की अवहेलना है।
2.	डिजिटल युग में प्राइवेसी के अधिकार पर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त की रिपोर्ट, 2014	• सरकारों को साबित करना होगा कि ऑनलाइन निगरानी के जरिए नागरिकों की प्राइवेसी में दखलअंदाजी अनावश्यक या मनमानी नहीं है। • ऑनलाइन परिधियों में प्राइवेसी के अधिकार के हनन से अभिव्यक्ति की आजादी, शांतिपूर्वक संगठित होने व सभा करने की आजादी, एक पारिवारिक जीवन के अधिकार तथा स्वास्थ्य के अधिकार आदि अन्य मानवाधिकारों के उपभोग की क्षमता गहरे तौर पर प्रभावित होती है।
3.	अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा व प्रोत्साहन पर विशेष संवीक्षक की रिपोर्ट, 2015	• ऑनलाइन संचार में एनक्रिप्शन तथा गोपनीयता की व्यवस्था डिजिटल युग में अभिव्यक्ति की आजादी के अधिकार का उपभोग करने के लिए आवश्यक प्राइवेसी और सुरक्षा प्रदान करता है। सरल शब्दों में कहें तो : अपनी पहचान या भौगोलिक पते को उजागर किए बिना तथा इस संचार के किसी गलत हाथों में पड़ जाने के भय से मुक्त रहते हुए ऑनलाइन संदेश भेजने और प्राप्त करने की क्षमता मुक्त अभिव्यक्ति के लिए बेहद महत्वपूर्ण है।
घ. मुख्य विचार – तकनीक के माध्यम से होने वाली हिंसा से सुरक्षा		
1.	महिलाओं की स्थिति आयोग का 57वां सत्र, 2013	• सरकारों को सोशल मीडिया सहित सभी ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स पर महिलाओं के विरुद्ध होने वाली हिंसा की रोकथाम के लिए एक उचित प्रक्रिया विकसित करनी चाहिए।
ड. मुख्य विचार – डेटा अधिकार		
1.	प्लेटफॉर्म न्यूट्रेलिटी पर फ्रेंच डिजिटल काउंसिल की रिपोर्ट, 2014	• ऐसे ऑनलाइन प्लेटफॉर्म (जैसे सर्च इंजन, सोशल मीडिया आदि) जो प्रयोक्ताओं के बीच आदान-प्रदान को सुगम बनाते हैं, उन्हें इस बारे में एकदम पारदर्शी रवैया अपनाना चाहिए कि वे प्रयोक्ताओं से संबंधित डेटा किस तरह इकट्ठा करते हैं।

2.	यूरोपीय यूनियन सामान्य डेटा रक्षा नियमन (जनरल डेटा प्रोटेक्शन रेगुलेशन - जीडीपीआर), 2018 से प्रभावी होगा।	• स्वत:स्फूर्त बिग डेटा विश्लेषण जिसमें व्यक्तियों के बारे में जानकारियों को इकट्ठा किया जाता है, उसका व्यक्तियों के विरुद्ध सामाजिक या आर्थिक भेदभाव की प्रक्रियाओं के लिए बिल्कुल इस्तेमाल नहीं किया जाएगा। उदाहरण : अगर पुलिस दोबारा अपराध की आशंका वाले व्यक्तियों का विश्लेषण करने के लिए बिग डेटा का अध्ययन करती है और इस तरह नस्ली या सामुदायिक अल्पसंख्यकों को ज्यादा बड़ी संख्या में निशाना बनाती है तो उसे केवल बिग डेटा के आधार पर ऐसा फैसला लेने की छूट नहीं दी जा सकती। • नागरिकों को सरकार द्वारा बिग डेटा आधारित निर्णय प्रक्रिया की विशेषताओं के बारे में जानकारी और स्पष्टीकरण मांगने का अधिकार है। कहने का मतलब यह है कि नीति निर्माता 'मशीन/कंप्यूटर ने हमें यह फैसला लेने के लिए बाध्य किया' जैसे बहाने नहीं बना सकते। निर्णय लेने वाला सॉफटवेयर जिन मानकों और कसौटियों के आधार पर काम करता है वे सभी के सामने प्रत्यक्ष और स्पष्ट होने चाहिएं।

13. भारत में डिजिटल अधिकारों के एजेंडा को आगे बढ़ाने के लिहाज से कुछ महत्वपूर्ण नीतिगत बदलाव क्या रहे हैं?

जहां तक नागरिकों को गारंटीशुदा इंटरनेट पहुंच मुहैया कराने का सवाल है तो भारत ने निश्चय ही कुछ प्रगति की है। राष्ट्रीय दूरसंचार नीति (2012) में ब्रॉडबैंड के अधिकार की बात की गयी है। मगर इस नीति की भावना को लागू करने के लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है। भारत ब्रॉडबैंड योजना के माध्यम से एक देशव्यापी ब्रॉडबैंड व्यवस्था रचने की दिशा में प्रगति बहुत कमजोर रही है। इसके अलावा, ज्यादातर लोगों के लिए कनेक्टिविटी की गुणवत्ता भी बहुत दयनीय है। ब्रॉडबैंड की बैंचमार्किंग यानी स्तर संबंधी मानक भी दूसरे देशों के मानकों से काफी पीछे हैं। जरा इस पर गौर करें : राष्ट्रीय दूरसंचार नीति (2012) में ब्रॉडबैंड को एक ऐसे इंटरनेट कनेक्शन के रूप में परिभाषित किया गया है जिसकी अपलोड और डाउनलोग की स्पीड प्रति सेकेंड 512 किलोबाइट (केबीपीएस) के बराबर या उससे ज्यादा हो। इसके विपरीत, अमेरिका में फेडरल कम्युनिकेशंस कमीशन के मुताबिक ब्रॉडबैंड का मतलब ऐसे कनेक्शन से है जिसकी डाउनलोड स्पीड 25 मेगाबाइट प्रति सेकेंड (एमबीपीएस) और अपलोड स्पीड 3 एमबीपीएस हो।

इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात है कि जहां एक तरफ अमेरिका और बहुत सारे यूरोपीय देशों ने कठिन और दुर्गम इलाकों में कनेक्टिविटी पहुंचाने के लिए समुदाय के स्वामित्व वाले नेटवर्कों का प्रयोग किया है वहीं दूसरी तरफ हमारे देश में भारत ब्रॉडबैंड स्थानीय स्तर पर सेवा पहुंचाने के लिए भी निजी ताकतों को ज्यादा प्राथमिकता देता है। इस नीति की वजह से बहुत सारे इलाके कनेक्टिविटी के दायरे से बाहर छूट जाते हैं।

भारतीय दूसरसंचार प्राधिकरण (ट्राई) ने लंबे समय तक डेटा सेवाओं पर किसी तरह का अंकुश नहीं रखा था। ट्राई ने इस क्षेत्र में दिलचस्पी लेना कुछ साल पहले ही शुरू किया था जब इंटरनेट कंपनियों और दूरसंचार प्रदाताओं के बीच रियायती या निशुल्क कॉन्टेंट सेवाओं के लिए नये-नये और बड़े-बड़े सौदे हो रहे थे। उदाहरण के लिए, फेसबुक ने रिलायंस कम्युनिकेशन के साथ उसकी 'फ्री बेसिक्स' वेबसाइट के लिए सौदा किया। इस सौदे के अनुसार, यह वेबसाइट उन ग्राहकों के लिए निशुल्क उपलब्ध करायी गयी जिन्होंने रिलायंस से मोबाइल डेटा प्लान लिया हो। ट्राई ने इस मुद्दे को अपने संज्ञान में लिया क्योंकि वह इस तरह के समझौतों में छिपी प्रतिस्पर्धा-विरोधी प्रवृत्तियों के बारे में चिंतित था। फरवरी 2016 में ट्राई ने इंटरनेट और दूरसंचार कंपनियों के बीच हुए समझौतों के आधार पर कॉन्टेंट सेवाओं के लिए अलग-अलग कीमतों की वसूली पर भी पूरी तरह पाबंदी लगा दी थी। फिलहाल ट्राई इस बारे में एक और पब्लिक कंसल्टेशन का आयोजन करने जा रहा है जिसमें इस बात पर चर्चा की जाएगी कि निशुल्क डेटा सेवाएं किस तरह मुहैया करायी जाएं ताकि मोबाइल इंटरनेट और ज्यादा किफायती हो और ऐसे तौर-तरीकों को बढ़ावा न मिले जिनकी वजह से कॉन्टेंट पर किसी भी तरह की इजारेदारी पैदा हो सके।

इंटरनेट के सार्थक प्रयोग को सुनिश्चित करने के लिए सहायक कानूनों व नीतियों के निर्धारण की दिशा में भारत को अभी काफी लंबा सफर तय करना है। इस दिशा में कुछ संकेत यह हो सकते हैं :

- राष्ट्रीय डिजिटल साक्षरता मिशन के माध्यम से शुरू किये गये डिजिटल साक्षरता प्रयासों को आधारभूत कंप्यूटर निपुणता के प्रशिक्षण से आगे जाकर डिजिटल समाज में सहभागिता की नागरिक क्षमताओं के विकास में सक्रिय रूप से निवेश करना चाहिए। इसके लिए स्कूलों को नयी डिजिटल नागरिकता साक्षरता प्रक्रियाओं का केंद्र बनाया जा सकता है।

- पीडीएस के तहत दिये जाने वाले निशुल्क खाद्य राशन की तरह सब्सिडी मॉडल के जरिए सभी नागरिकों को एक निशुल्क डेटा भत्ता भी मुहैया कराया जाना चाहिए। भारत ब्रॉडबैंड को स्थानीय स्तर पर सामुदायिक स्वामित्व वाले नेटवर्कों को प्राथमिकता देनी चाहिए जिनका प्रबंधन सामुदायिक समूहों या स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के हाथों में हो सकता है।

- भारत ब्रॉडबैंड परियोजना के जरिए पूरे देश में बनाये जा रहे ब्रॉडबैंड नेटवर्क को नागरिकों के लिए सूचना व सेवाएं मुहैया कराने वाले स्थानीय लोक संस्थानों के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए। शैक्षिक एवं शिक्षाशास्त्रीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थानीय भाषा में ऑनलाइन कॉन्टेंट को और बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

- ऐसे तकनीकी प्लेटफॉर्म्स पर सरकारी सेवाओं व योजनाओं का विकास किया जाना चाहिए जो गैर-स्वामित्व वाले सॉफ्टवेयर और कम बैंडविड्थ वाले कनेक्शन पर भी काम कर सकें।

आज के दौर में एक जीवंत लोकतंत्र के लिए समग्र डिजिटल अधिकार रूपरेखा आवश्यक है। ब्राजील की सरकार ने 'इंटरनेट के लिए नागरिक अधिकारों की रूपरेखा' लागू की है। हमें भी इसी तरह की रूपरेखा लागू करनी चाहिए मगर इसमें सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों को भी शामिल करना चाहिए। इस तरह के कानून समाज को इसके योग्य बना सकता है कि डिजिटल दायरों में सहभागिता को नागरिकता के लिए अनिवार्य माना जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी ई-गवर्नेंस नीतियों की रूपरेखा और क्रियान्वयन में व्यक्तियों व सुमदायों के अविभाज्य मानवाधिकारों को पूरा सम्मान व जगह मिले। डिजिटल अधिकारों की यह पद्धति प्रौद्योगिकी व डेटा की संरचना व स्वामित्व पर चर्चा का भी मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं क्योंकि इन्हें प्रमुख जन संसाधनों के रूप में देखना जरूरी है।

14. इंटरनेट तक पहुंच के मामले में भारत आज कहां पहुंचा है?

संख्या की दृष्टि से भारत दुनिया के उन देशों में एक है जहां इंटरनेट प्रयोक्ताओं की संख्या सबसे ज्यादा है। भारत को एक तरह की दूरसंचार क्रांति के रूप में भी देखा जाने लगा है। खासतौर से इसलिए क्योंकि पिछले एक दशक के दौरान भारत और दुनिया भर में मोबाइल फोनों के इस्तेमाल में बहुत तेजी से इजाफा हुआ है। मगर भारत में मोबाइल फोन के इस फैलाव से बड़े पैमाने पर इंटरनेट तक पहुंच संभव नहीं हुई है। अप्रैल 2016 के प्यू डेटा के अनुसार भारत अभी भी इंटरनेट तक पहुंच के लिहाज से ज्यादातर उभरती अर्थव्यवस्थाओं से पीछे है। हमारे यहां इंटरनेट तक पहुंच केवल 22 प्रतिशत है और स्मार्ट फोन इस्तेमाल करने वालों की संख्या केवल 17 प्रतिशत है। उपरोक्त अध्ययन में जिन 21 देशों का विश्लेषण किया गया उनमें इंटरनेट तक पहुंच और स्मार्टफोन का इस्तेमाल करने वालों की संख्या क्रमशः 54 और 35 प्रतिशत थी।

इंटरनेट तक पहुंच से ग्रामीण महिलाएं सबसे ज्यादा वंचित हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण, 2014 में इंटरनेट पहुंच के मामले में ग्रामीण-शहरी विभाजन बहुत साफ दिखायी देता है। ऐसे भारतीय परिवार, जिनमें कम से कम एक व्यक्ति के पास इंटरनेट तक पहुंच हो, उनकी संख्या ग्रामीण इलाकों में मात्र 16.1 प्रतिशत थी जबकि शहरों में यह संख्या 48.7 प्रतिशत थी। बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप, 2016 के सर्वेक्षण में भी इंटरनेट तक पहुंच में लैंगिक विभाजन के निर्विवाद साक्ष्य पाये गये थे। इस सर्वेक्षण में पाया गया था कि गांवों में 98 प्रतिशत और शहरों में 79 प्रतिशत इंटरनेट प्रयोक्ता पुरुष ही हैं।

इंटरनेट कनेक्शन की लागत इसके इस्तेमाल के रास्ते में एक बड़ी रुकावट है। यों तो पूरे देश में डेटा की लागतें घटती जा रही हैं (फिलहाल एक जीबी डेटा की कीमत औसत मासिक आय के 2% से भी कम है) मगर अभी भी हर पांच में से एक व्यक्ति कनेक्शन के लिए 500 एमबी का छोटा सा पैकेज भी खरीदने की स्थिति में नहीं है। इसका मतलब यह है कि इंटरनेट तक सभी नागरिकों की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए बाजार में प्रतिस्पर्द्धा के जरिए कीमतों में कमी लाने की नीति ही काफी नहीं होगी। हो सकता है इसके लिए सरकार को इंटरनेट को एक सार्वजनिक वस्तु के रूप में अनिवार्य रूप से प्रदान करने की व्यवस्था करनी पड़े। इसके लिए सब्सिडीयुक्त पहुंच, सार्वजनिक पहुंच केंद्रों की स्थापना, युवाओं के लिए डिजिटल लाइब्रेरियों की

स्थापना और पीडीएस की तर्ज पर सार्वभौमिक डेटा भत्ते आदि उपायों पर विचार किया जा सकता है (अधिक विवरण के लिए प्रश्न 13 देखें)।

अपने लिए उपयोगी सूचनाओं को ढूंढने या लोक सेवाओं से जुड़ने के लिए इंटरनेट के सार्थक प्रयोग की लोगों की सीमित क्षमता भी एक बड़ी रुकावट है। इसकी एक वजह यह है कि स्थानीय भाषा में कॉन्टेंट अभी भी बहुत कम हैं और ज्यादातर सरकारी वेबसाइट्स की बनावट बहुत जटिल है। सरकार को स्थानीय भाषा में ऑनलाइन लोक सूचनाएं व ज्ञान अभिलेखागार तैयार करने के लिए नागर समाज को और ज्यादा मदद देनी चाहिए। वेब पोर्टल्स की रूपरेखा पर ध्यान देना भी जरूरी है तकि नागरिकों का ऑनलाइन अनुभव सरल, सार्थक और लाभदायक हो सके।